

UNEVEN PAGE NUMBERS IN THE BOOK

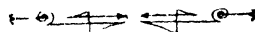
UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180553

UNIVERSAL
LIBRARY

श्री वृन्दावनलाल वस की उपन्यास कला

['झाँसी की रानी' एवं 'मृगनयनी' में]



लेखक —

प्रो० रामचरण महेन्द्र, एम्० ए०
हरबर्ट कालेज, कोटा (राजस्थान)

प्रकाशक —

सरस्वती पुस्तक सदन, मोतीकटरा, आगरा

थमावृत्ति }
१००० }

जुलाई १९५३

} मूल्य

भूमिका

श्री वृन्दावनलाल वर्मा ऐतिहासिक उपन्यास के क्षेत्र में स्थायी कला कृतियों उपस्थित कर रहे हैं। न केवल कला की दृष्टि से, वरन् ये ऐतिहासिक उपन्यास जीवन एवं समाज सम्बन्धी अनेक ज्वलन्त समस्याओं से परिपूर्ण हैं। इनमें वर्मा जी ने अतीतकालीन संघर्षों एवं भारतीय संस्कृति के सजीव चित्र खींचे हैं। हर्ष का विषय है कि आपके उपन्यास जनता तथा विद्यार्थी वर्ग का निरन्तर ध्यान आकृष्ट कर रहे हैं। 'मृगनयनी' पर वर्मा जी को पुरस्कार भी प्राप्त हो चुके हैं। कुछ उपन्यास पाठ्यक्रमों में भी नियत किए गए हैं।

वर्मा जी की उपन्यास कला के विस्तृत अध्ययन की आवश्यकता बहुत दिनों से बनी थी। हमने कई मित्रों से आग्रह किया कि वे उनकी कला पर लिखें किन्तु कहीं से कुछ आता न देख यह प्रारम्भिक आलोचनात्मक अध्ययन इस दृष्टि से प्रस्तुत कर रहे हैं कि विद्वान् आलोचक इस ओर अध्ययन करें। P.G. H/1822

वर्मा जी की कला पर जो पुस्तकें अभी तक प्रकाशित हुई हैं जैसे—प्रो० रामलाल सावल एम० ए० की 'भौंसी की रानी समीक्षा' श्री रामखेलावन चौधरी तथा डा० लक्ष्मीनारायण टण्डन की 'मृगनयनी समीक्षा', प्रो० हरस्वरूप माथुर की 'मृगनयनी समीक्षा' श्री श्यामजोशी एम० ए० की 'भौंसी की रानी एक दृष्टि' आदि उन सभी से, तथा भिन्न-भिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित लेख तथा आलोचनाओं से हमें इस पुस्तक की सामग्री संकलन में बहुत सहायता मिली है। अतः हम इन सभी विद्वानों के हृदय से कृतज्ञ हैं। हमारा अनुरोध है कि विद्यार्थी सम्बन्धित सभी आलोचनात्मक पुस्तक का पढ़कर अपनी योग्यता बढ़ावें। इस पुस्तक का उद्देश्य यह है कि विद्यार्थी स्वयं वर्मा जी की कला के विषय में सोचें और स्वयं मौलिक दृष्टि से विचार करना सीखें।

हरबर्ट कालेज.

—प्रो० रामचरण महेन्द्र एम० ए०

विषय सूची

म खण्ड

१—श्री वृन्दावनलाल वर्मा के उपन्यास (२) साहित्यिक जीवन का विकास (३) वर्मा जी का साहित्य (४) ऐतिहासिक उपन्यास (५) वर्मा जी की उपन्यास कला ।

विषय गत की विशेषताएँ :—

(१) ऐतिहासिक रोमाँस (२) युद्धों की पृष्ठ भूमि (३) घटना की बहुलता (४) इतिहास की प्रमाणिकता (५) बुन्देलखण्डी जीवन का प्रतिपादन (६) प्राकृतिक जीवन की बहुलता (७) आदर्शोन्मुख चरित्रवाद (८) सामाजिक समस्याओं का चित्रण (९) मनावैज्ञानिक अन्तर्दृष्टि ।

टेक्नीक सम्बन्धी विशेषताएँ :—(१) कथानक पटुता (२) वस्त्र चित्रण (३) कथोपकथन (४) वातावरण (५) शैली (६) भाषा

उपन्यासों की कुछ त्रुटियाँ :—(१) वर्तमान जीवन के चित्रण का अभाव (२) आन्तरिक जीवन, विश्लेषण की कमी (३) ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि से उत्पन्न शुष्कता (४) अनावश्यक विस्तार (५) कथा-विकास में त्रुटियाँ ।

द्वितीय खण्ड : मृगनयनी समीक्षा

(१) मृगनयनी : कथासार (२) कथानक की विशेषताएँ (३) एव प्रासंगिक कथाएँ (४) पात्र एवं चित्रण (५) प्रमुख पात्रों का अध्ययन (६) गौण चरित्र (७) कथोपकथन (८) शैली (९) सर-सं (१०) अलंकार (११) भाषा (१२) देशकाल वातावरण (१३) ग्रन्थ का निहित संदेश ।

तृतीय खण्ड : भाँसी की रानी लक्ष्मीबाई

१—कथानक सौन्दर्य :—

(१) महत्व (२) कथावस्तु विकास (३) उदय (४) मध्य
(५) अस्त (६) कथानक की विशेषताएँ (वस्तु विकास-पटुता, अस्म
स्वच्छ घटनाएँ, रोचकता और कुतूहल)

२—चरित्र चित्रण :—

(१) लक्ष्मीबाई (२) गंगाधरराव (३) नात्या टोपे (४) पी
अली (५) सगरसिंह डाकू (६) अली बहादुर (७) कप्तान गाडन (८)
खुदाबक्श (९) बरहानुद्दीन (१०) दीवान दूल्हाजू (११) रघुनार्थसिंह
(१२) जवाहरसिंह (१३) नागी पात्र .— सुन्दर, सुन्दर, काशीबाई-
जुही, भलकारी ।

चरित्र चित्रण की विशेषताएँ .—(१) आदर्शों की सृष्टि (२)
स्थिर एवं गतिशील चरित्र (३) वर्गगत और व्यक्तिगत पात्र (४)
मनोवैज्ञानिक आधार ।

३—वातावरण :—

(१) ऐतिहासिक (२) राजनैतिक (३) सामाजिक एवं धार्मिक
(४) प्राकृतिक ।

४—मुख्य समस्याएँ :—

५—शैली-भाषा एवं रस



प्रथम खण्ड

श्री वृन्दावनलाल वर्मा के उपन्यास

हिन्दी उपन्यास साहित्य में श्री प्रेमचन्द जी के पश्चात् श्री वृन्दावनलाल वर्मा का नाम अग्रगण्य है। जहां प्रेमचन्दजी का क्षेत्र सामाजिक (विशेषतः ग्राम्य जीवन) है, वर्मा जी का मुख्य क्षेत्र ऐतिहासिक है। प्रेमचन्द जी ने ग्राम्य जीवन, समाज की अर्थ-समस्या, राष्ट्रीय आन्दोलन, विधवा जीवन, बेश्याएँ, जमींदार और पँजीतियों के जीवन की कुरूपता और समाज की विद्रूपताएँ अंकित की और सुधारवादी मनोवृत्ति का परिचय दिया है। दूसरी ओर वर्मा जी ने अपने विशाल ऐतिहासिक अध्ययन के बल पर प्राचीन और मध्यमय चरित्रों तथा तत्कालीन सांस्कृतिक वातावरण को जीवित और व्यवहारिक आदर्शवाद की प्रतिष्ठा की है।

यों तो वर्मा जी ने सामाजिक उपन्यासों की भी रचना की है; किन्तु इनमें वे इतने तन्मय नहीं हो सके हैं, जितने ऐतिहासिक उपन्यासों में खिल उठे हैं। बुन्देलखण्ड के स्थानीय इतिहास से संबंधित आपके ऐतिहासिक उपन्यास सब से सफल रहें हैं। कुछ उपन्यासों में बुन्देलखण्ड के जीवन के अतिरिक्त तत्कालीन भारत की धार्मिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक अवस्थाओं पर भी प्रकाश डाला

है। इनमें आपने प्राचीन भारतीय संस्कृति एवं वातावरण को पुनर्जीवित करने का सफल प्रयास किया है।

“इनके उपन्यासों में जो सत्य-दृष्टि, चित्रण क्षमता और पुरातन-आदर्शों के निरीक्षण की प्रवृत्ति है, वह हिन्दी कथा-साहित्य में एक नूतन दैन बन गई है। निःसंदेह, वर्मा जी ने इतिहास के सत्य के अधिक निकट से पकड़ा है और उनके पात्र उधार लिए हुये नहीं वरन् चिर परिचित ऐतिहासिक मानव हैं, जो परिस्थितियों के अनुकूल जीवन से सतत संघर्ष वहन करते हैं।

साहित्यिक जीवन का विकास

वर्मा जी की साहित्यिक प्रतिभा का विकास किस क्रम से हुआ इसका उत्तर स्वयं उन्होंने लिखा है। आप लिखते हैं—

“मैंने पहले पहल सन् १९०५ में एक उपन्यास लिखा था और दो नाटक। फिर सन् १९०६ में तीन नाटक लिखे। इसके उपरान्त सन् १९०८ तक चार नाटक लिखे। इनमें से एक छपा और १९०९ में जप्त भी हो गया। फिर निबन्ध इत्यादि लिखता रहा और अधूरे नाटक उपन्यास भी। कविता का भी शौक था, परन्तु इसका पीछा मैंने जल्दी छोड़ दिया।”

एक दिन १९१७ में मैंने अपनी पुरानी रद्दी टटोली। बरसात दिन थे। एक मटके में काफी बरसाती पानी भरा हुआ था। केवल पहला उपन्यास तो न जाने किस लोभ से रख लिया, बाकी को — समाधि दे दी।

१९०८ में बुद्ध का जीवन-चरित्र लिखा था जो राजपूत आगरा में छपा था। कुछ छोटी-छोटी पुस्तकें कलकत्ते के भारत प्रेस में सन् १९०९ में छपीं थीं। अब जो पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं, इस प्रकार हैं—

वर्मा जी का साहित्य

१—ऐतिहासिक उपन्यास— (१) गढ़ कुंडार (२) विराटा की पद्मिनी, (३) भांसी की रानी लक्ष्मीबाई, (४) मुमाहिबजू, (५) झत्रसाल, (६) सत्तर सौ बत्तीस, (७) शाह गफूर, (८) आनन्द-धव, (९) ललितादित्य, (१०) राणा सांगा, (११) माधव जी सिंधिया, (१२) टूटे कांटे, (१३) मृगनयनी; (१४) कचनार ।

२—सामाजिक उपन्यास— (१) कुण्डलिचक्र, (२) प्रत्यागत (३) हृदय की हिलोर, (४) प्रेम की भेंटें, (५) कभी न कभी, (६) लगन, (७) अचल मेरा कोई, (८) शबनम, (९) सोना ।

३—ऐतिहासिक नाटक— (१) फूलों की बोली, (२) हंस- (३) भांसी की रानी, (४) जहांगिरशाह ।

४—सामाजिक नाटक— (१) धीरे धीरे, (२) राखी की लाज (३) बाँस की फाँस, (४) पायल, (५) मंगलसखा, (६) कब तक (७) पीले हाथ, (८) सगुन, (९) काश्मीर का कांटा, (१०) टण्टा गुरु ।

५—एकांकी नाटक— (१) नीलकण्ठ, (२) शासन का डंडा (३) कनेर, (४) लो भाई पाँचों लो, (५) टंटा गुरु, (६) नरक का चिड़ीमार (अनुवाद)

६—कहानियाँ— (संग्रह) (१) हारसिंगार (२) कलाकार का दण्ड (३) दबे पांव ।

वर्मा जी के ऐतिहासिक उपन्यास

वर्मा जी के सामाजिक उपन्यासों की संख्या भी पर्याप्त है और वे एक स्वतन्त्र पुस्तक का विषय हैं । इस पुस्तक में हम उनके ऐतिहासिक उपन्यासों (विशेषतः उनकी सर्व श्रेष्ठ कृतियाँ 'मृगनयन'

और भांसी की रानी लक्ष्मीबाई') पर विचार करेंगे । अपने ऐतिहासिक रोमांटिक उपन्यासों द्वारा वर्मा जी ने हिन्दी उपन्यास साहित्य में एक नवीन अध्याय खोला है । उनके पीछे पर्याप्त खोजबीन और ऐतिहासिक अनुसंधान है । अपने उपन्यासों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के निर्माण में वर्मा जी ने विशेष श्रम किया है । कहीं-कहीं तो इतिहास की सत्यता एवं सूक्ष्मता का उन पर प्रभाव रहा है कि उनके इतिहासकार ने उपन्यासकार को दवा मा लिया है । कहीं-कहीं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की सत्यता के लिये उपन्यासकार शुष्क ऐतिहासिक वर्णनों को रखने का लोभ संवरण नहीं कर सके हैं ।

ऐतिहासिक हिन्दी उपन्यास साहित्य में वर्मा जी युगान्तरकारी कहे जा सकते हैं । वर्मा जी जिस समय हिन्दी उपन्यास क्षेत्र में अवतीर्ण हुए ऐतिहासिक उपन्यास क्षेत्र अविकासित दशा में था । बंगला, मराठी और गुजराती से अनूदित होकर कुछ उपन्यास आ रहे थे । श्री किशोरीलाल गोस्वामी के इन्ने गिने प्रारम्भिक उपन्यास थे । वर्मा जी ने ऐतिहासिक उपन्यास को दृढ़ता से ग्रहण किया और लेखकों का ध्यान हम उपेक्षित वर्ग की ओर आकृष्ट किया । 'वाम्तव में देखा जाय तो ऐतिहासिक उपन्यासों का श्री गणेश वर्मा जी ने ही किया ।

❁ श्री रामगोपाल विद्यालकार की यह सम्मति देखिये—“भामी की रानी” लेखक की १४ वर्ष की ऐतिहासिक खोज-बीन का परिणाम है । अतएव ऐतिहासिक दृष्टि से इसका महत्त्व अमनिदग्ध है, परन्तु प्रस्तुत उपन्यास को हम उपन्यासों की अपेक्षा इतिहास के ग्रन्थों की श्रेणी में रखना अधिक पसन्द करेंगे । बीच-बीच में अनेक स्थलों पर इस ग्रन्थ के ऐतिहासिक वर्णन, वार्तालाप, भाव प्रकाशन, भाषा और शैली इत्यादि मनोरञ्जक एवं उत्कृष्ट होते हुये भी, इसका कथानक उपन्यासों सरीखा नहीं बन पड़ा है : हा, उस समय की राजनैतिक दशा का ज्ञान भली भाँति हो जाता है । —‘वीर अर्जुन-

उनके 'भाँसी की रानी', 'गढ़ कुंडार' आदि शुद्ध ऐतिहासिक उपन्यास कहे जा सकते हैं।^x

उपन्यासकार के रूप में वर्मा जी मुंशी प्रेमचन्द की तरह अपने क्षेत्र में अद्वितीय हैं, बल्कि यों कहना चाहिए कि ऐतिहासिक उपन्यासों के लेखक रूप में सर्वश्रेष्ठ हैं। उनके 'गढ़ कुंडार', 'भाँसी की रानी', 'विराटा की पद्मिनी' नामक ऐतिहासिक उपन्यास उनकी इस अद्वितीयता और सर्वश्रेष्ठता के अमर गौरव चिह्न हैं। 'कचनार' उसी शृङ्खला की नई सबल कृति है। मेरी दृष्टि में वर्मा जी साहित्य जगत के एक ऐसे सिद्ध यात्री हैं, जो अपनी मंत्र-पूत लेखनी से इतिहास के विमृष्ट कंकाल को छूकर, उसे वास्तविक रंग रूप और आकृति प्रदान करके पुनरुज्जीवित तो करते ही हैं, साथ ही अमर भी बना देते हैं। वर्मा जी इस कौशल का जीता जागता उदाहरण 'गढ़ कुंडार', 'भाँसी की रानी', 'कचनार' इत्यादि उपन्यासों में मिलता है।—

वर्मा जी की उपन्यास कला

१—ऐतिहासिक रोमान्स:—वर्मा जी के उपन्यास खोलते ही हम अतीत के सामन्ती दर्प, राजनैतिक उथल पुथल, राजपूती-शौर्य, युद्ध और प्रेम के संघर्ष पूर्ण युग में आ पहुँचते हैं, जिसकी कल्पना मन में स्फूर्ति उत्पन्न कर देती है। ऐतिहासिक वातावरण का सफल चित्रांकन उनकी कला का प्रथम आकर्षण है।

वर्मा जी ने जिस वर्ग के ऐतिहासिक उपन्यास लिखे हैं, वे युद्ध, प्रेम एवं वैचित्र्य से परिपूर्ण रोमांटिक शैली के हैं। रोमांटिक रचना के अन्तर्गत हम वे प्रेम कथाएँ रखते हैं, जिनकी पृष्ठभूमि युद्ध है, तथा जिसमें साहस, Spirit of adventure उत्साह, वीरता और

x — श्री श्याम जोशी एम० ए०

÷ — श्री चिरजीत— 'मनोरजन' जनवरी ४८ पृष्ठ ५५

प्रेमिका के लिए सतत संघर्ष है। इनमें स्थानीय प्रकृति के चित्रण की बहुलता रहती है। रोमांटिक प्रेम कथाओं में निरन्तर सजीवता और सतर्कता होती है। विघ्न बाधाओं से भरी हुई घटनाएं प्रेमी और प्रेमिका को पृथक रखती हैं, किन्तु अन्त में असंख्य प्रतिकूलतः आः के नायक (जो प्रायः धीरोदत्त रहता है) प्रेमिका को प्राप्त करता है।

वर्मा जी के रूमानी उपन्यास की प्रमुख विशेषता यह है कि उन्होंने पाश्चात्य उपन्यासकारों ड्यूमा और वाल्टर स्काट की भांति घटना-प्रधान प्रेम कहानियों की सृष्टि की है। उनके उपन्यासों में एक सुन्दर मुख्य पात्री होती है, जिसके अद्भुत रूप, गुण शौर्य के कारण एक धीर वीर प्रकृति का उज्ज्वल चरित्र वाला नायक मुग्ध होता है, नाना कठिनाइयों में विघ्न बाधाएं, युद्ध इत्यादि पार कर अन्ततः प्रेमिका को प्राप्त करता है। उसके प्रेम में सस्ती वासनात्मक आंधीन होकर, शान्त सच्चे प्रेम की दृढ़ता और कर्मण्यता होती है। पुरुष पात्र यदि शक्ति का अवतार कहा जाय तो स्त्री पात्र पवित्रता की प्रतिमा होती है। प्रमुख नारी पात्र (Heroine) के चरित्रों को प्रमुखता दी गई है। वह मूल संघर्ष में रहती है और कथानक उसके चरित्र के साथ इधर उधर संचालित होता रहता है। कुछ उपन्यासों का नामकरण भी इसी मुख्य आकर्षण केन्द्र के नाम पर हुआ है—जैसे—कचनार, भांसी की रानी, मृगनयनी इत्यादि। यह पात्री ही उपन्यास की धुरी बनती है जिस पर समस्त उपन्यास की घटनाएं नाचती रहती हैं। 'कचनार' में मानसिंह की अपेक्षा कलावती, मृगनयनी में राजा मानसिंह तोमर की अपेक्षा निन्नी, भांसी की रानी में, लक्ष्मीबाई के चरित्रों को प्रमुखता प्रदान की गई है। समस्त कथानक इन्हीं पात्रियों के इर्द-गिर्द घूमता रहता है। ये ही पात्रियें मुख्य पात्रों के हृदय में साहस-भावना (Spirit of Adventure) उत्पन्न करती हैं। इन्हीं से नाना परिस्थितियों और नाना घटनाओं का निर्माण होता है। इनका प्रेम कथानक में प्रभावात्मक

तीव्रता और कुतूहल की भावना प्रदीप्त रखता है। प्रेम और साहस भावना से संयुक्त कथासूत्र आगे चलता रहता है।

वर्मा जी के चित्रण की सफलता इसमें है कि हम मूल पात्र-पात्रियों से पूर्ण तादात्म्य का अनुभव करने लगते हैं। उनके हर्ष में प्रफुल्ल और कष्ट में चिन्तित होते हैं। कुछ देर के लिये हम स्वयं अपनी पृथक् सत्ता विस्तृत कर बैठते हैं। वर्मा जी के उपन्यासों में वर्णित घटनाओं में जो सजीवता, मर्मस्पर्शिता है, वह हमारी रूचि बनाये रहती है। हम निरन्तर सरसता का आनन्द लेते रहते हैं।

इन रूमानी उपन्यासों में चित्रित प्रेम सम्बन्ध पवित्रता और उज्ज्वलता की आर उन्मुख है। रोमान्सों में जो वासना की कालिमा सस्तापन और गन्दगी होती है, वर्मा जी के उपन्यास उससे सर्वथा मुक्त हैं। उनके प्रेमियों में दृढ़ता और कर्मण्यता है। वे जिससे प्रेम करते हैं, सदा के लिये उसी के हो जाते हैं। भंवरावृत्ति उनमें कहीं भी नहीं है। उदाहरण के लिये वर्मा जी के 'गढ़ कुंडार' में नाग-दिवाकर, 'विराटा की पद्मिनी' में कुमुद-कुञ्जर, 'कचनार' में मानसिंह और कलावती, दलीपसिंह और कचनार, 'मृगनयनी' में लाखी-अटल, निन्नी-मानसिंह, 'भांसी की रानी' में गंगाधरगव और लक्ष्मीबाई, छाटी-नारायण शास्त्री, मांती खुदावन्श, मुन्दर-रघुनाथसिंह, जुही-तात्या इत्यादि प्रेमी-प्रेमिकाएँ दृढ़ और कर्मण्य हैं। कहीं कहीं तो इनकी पवित्रता के सम्मुख हमारा मस्तक नत हो जाता है।

वर्मा जी ने प्रेम चित्रण प्रायः दो प्रकार से है। प्रत्येक उपन्यास में हमें एक ऐसा जोड़ा मिल जाता है, जिसका प्रेम-निर्वाह आदर्श कहा जा सकता है। ये प्रेमी मार्ग में आने वाली नाना कठिनाइयों से विचलित नहीं होते, नाना अड़चनों का सामना करते हुए अन्त तक सच्चे प्रेमी बने रहते हैं। कहीं कहीं इनका त्याग, गहनता, तन्मयता इतनी अधिक है कि हमारा मस्तक श्रद्धा से नत हो जाता है। ये पात्र अपूर्व बलिदान की क्षमता रखते हैं। उदाहरण स्वरूप

‘कचनार’ में कचनार और दिलीपसिंह का प्रेम, कचनार की निस्वार्थ सेवा, त्याग, बलिदान, सतताद्योग, कर्तव्य भावना आदर्श है, उसमें वासना का अंश बहुत कम है। ‘मृगनयनी’ में मानसिंह तामर और मृगनयनी, लाखी और अटल का प्रेम, असंख्य प्रतिकूलताओं और कठिनाइयों के बावजूद निरन्तर सम्मुन्नत होता जाता है। लाखी के सम्मुख भिन्न भिन्न प्रकार के प्रलोभन लाये जाते हैं, आभूषणों सुन्दर वस्त्रों, विलासपूर्ण जीवन, ऐश्वर्य इत्यादि के आकर्षक दृश्य दिखाये जाते हैं, किन्तु वह चट्टान की तरह अटल और दृढ़ है। ‘भांसी की रानी’ में छ्वांटी और नारायण शाम्भू सच्चे प्रेमी हैं। लाखी-अटल के समान यह दम्पति प्रेम के निर्भक्ति जाति-पाँति धर्म का परित्याग कर निर्वासित भटकते रहते हैं। मांती और मुन्दर कर्तव्य से जकड़े होकर भी हृदय में विशुद्ध प्रेम की ज्वाला छुपाये रहते हैं। ये आदर्श प्रेमी कर्तव्य के प्रति जागरूक रहते हैं।

दूसरा वर्ग उन प्रेमियों का है, जिनमें उस उच्चकोटि का त्याग एवं वासना-हीनता न होकर साधारण पार्थिव या सस्ते रोमांटिक टाइप का है। ‘कचनार’ में मानसिंह अपने बड़े भाई दिलीपसिंह की व्याहता पत्नी कलावती पर उसे देखतेही आसक्त हो जाता है। सामाजिक नियंत्रण और चचा सोनेसाह के कठोर अनुशासन के कारण वह कुछ कर नहीं पाता पर मन ही मन कलावती का प्रेमिका के रूप में पाने का इच्छुक रहता है। दिलीप के हट जाने से वह राजा होने पर एक मास पश्चात ही उससे विवाह भी कर लेता है। वह वासना पर नियंत्रण नहीं कर पाता, कचनार, ललिता, मन्ना इत्यादि को भी अपनी वासनाओं का शिकार बनाना चाहता है। ‘भांसी की रानी’ में मांती और खुदाबख्श का प्रेम तो नाट्यशाला से आरम्भ होता है।

एक तीसरा वर्ग वासना के अंधे व्यक्तियों का है, जिन्हें अपनी वासना पूर्ति के अतिरिक्त कुछ भी नहीं दिखाई देता। वे नारी को अपनी कुत्सित इच्छाओं की पूत का साधन मानते हैं। उसके लिये

युद्ध करते हैं और उचित अनुचित रीति से उन्हें प्राप्त करने की कोशिश करते हैं। 'मृगनयनी' में मालवा सुल्तान नसीरुद्दीन के बारह हजार बेगम हैं, वह उनकी सख्या पन्द्रह हजार करने पर तुला हुआ है। अपने पिता को विष देकर इसने राज्य मानो विषय तृप्ति के लिये ही पाया है। मुसलमान पात्रों में इस प्रकार के अनेक व्यक्ति हैं।

युद्धों की पृष्ठभूमि:—

वर्मा जी ने इन उपन्यासों में युद्धों की पृष्ठभूमि (Back-ground) के रूप में रखा है। इनका वातावरण युद्ध के आतंक से सर्वत्र उत्तेजित रहता है। 'गढ़ कुण्डार' और 'विराटा की पद्मिनी' में युद्धादि के दृश्यों द्वारा नाटकीय चमत्कार उत्पन्न करने के स्वाभाविक अवसर मिल गये हैं। 'भांसी की रानी लक्ष्मीबाई' में सन् १८५७ की क्रांति, स्वातन्त्रता-आन्दोलन का प्रथम प्रयास, और राजनैतिक उथल-पुथल की सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक घटना का आधार माना गया है। देश का भी स्वराज्य आन्दोलन और आजादी की भावनाएँ, भारतीय सैनिकों का विरोध, अंग्रेजों के विरुद्ध अमताप और क्रान्ति की पृष्ठभूमि पर यह आधारित है। 'कचनार' में धामोनी और सागर के युद्धों का प्रमुखता दी गई है। डरू का धामोनी के विनाश की याचनाएँ बनाना, शत्रु सेवा में मिलकर कनल हा जाना, पिडारियो द्वारा लूट में भाग लेना, बध का सामना करने, दिल्लीपसिंह का सागर वालों से युद्ध, मरहठे गढ़पतिया में संघर्ष, सैनिक गुसाइयो का सैन्य संचालन, युद्ध और राजनीति में रुचि—हमें आने वाली लड़ाइयों की निरन्तर सूचना देते रहते हैं।

'मृगनयनी' में जिस काल को आधार माना गया है, वह छोटी बड़ी अनेक लड़ाइयों से सम्बन्धित है। इसका प्रमुख नायक ग्वालियर का राजा मानसिंह तोंमर है, जिसने १४८६ से १५१६ तक राज्य किया। वर्मा जी ने इस राजा के चरित्र एवं युद्धों की पृष्ठभूमि में रख

कर एक ऐतिहासिक रूमानी कथानक गढ़ा है। इस उपन्यास की पृष्ठभूमि के विषय में वे लिखते हैं:—

“अंग्रेज इतिहास लेखकों ने मानसिंह के राज्य काल को तामर शासन का स्वर्णयुग कहा है। पन्द्रहवीं शताब्दि का अन्त और १६वीं शताब्दि का प्रारम्भ राजनैतिक और आर्थिक दृष्टि से भारतीय इतिहास का कदाल कठोर और काला युग कहे तो अतिशयाक्ति न हांगी। उत्तर में सिकन्दर लोदी और उसके सहयोगियों के परस्पर युद्ध तथा दानों द्वारा जनपीड़न, राजस्थान में राणा कुम्भा का अपने बेटे के ही द्वारा विष द्वारा बध और उसके उपरान्त वहां की अराकता; गुजरात में महमूद बघरा के अराणित विजय और रक्तपात; मालवा में गयासुद्दीन खिलजी और उसके उत्तराधिकारी नसीरुद्दीन की अत्याचार प्रियता और अत्याशी; दक्षिण में बहमनी सल्तनत और विजयनगर राज्य के युद्ध और बहमनी सल्तनत का पाँच सल्तनतों में बिखर जाना, जौनपुर बिहार और बंगाल में पठान सरदारों की निरन्तर लूट खसोट और इन सबके बीच में ग्वालियर। ग्वालियर पर सिकन्दर लोदी के पिता बहलोल ने आक्रमण किए, फिर सिकन्दर ने ग्वालियर का कचूमर निकालने में कोई कसर नहीं छोड़ी। सिकन्दर ग्वालियर पर पाँच बार बेग में आया। पाँचों बार मानसिंह के सामने से उसे लौट जाना पड़ा अन्त में सिकन्दर का १५०४ में आगरा का निर्माण इसी मानसिंह तामर को पराजित करने के लिए करना पड़ा। ग्वालियर पर घेरा डालकर नरवर पर चढ़ाई कर दी। नरवर ग्वालियर राज्य में था। राजसिंह ने सिकन्दर का साथ दिया, तो भी नरवर वाले ११ महीने तक लगातार युद्ध में छाती अड़ाये रहे। जब खाने का घास और पेड़ों की छाल तक अलभ्य हो गई; तो उन लोगों ने आत्म समर्पण किया। फिर सिकन्दर ने मन की जलन नरवर स्थित मंदिरों और मूर्तियों पर निकाली।”

इस उपन्यास का अन्तिम आधार अनेक युद्धों की पृष्ठभूमि पर चलता है।

संघर्ष पूर्ण वातावरण को पृष्ठभूमि में रखकर वर्मा जी प्रेम, साहस, शौर्य और आदर्श की प्रेम कथाएँ (Romances) लिखी हैं। वातावरण की ऐतिहासिक सत्यता एवं प्रभावोत्पादकता पर वर्मा जी ने बड़ी सतर्कता से काम लिया है। युद्ध, आखेट, प्रेम, शौर्य तथा मध्यकालीन सामन्ती युग के चित्र होने के कारण स्थानीय प्रकृति, विशेषतः बुन्देलखण्ड के समीप के वातावरणों के सजीव और विस्तृत चित्र भी अंकित किए गये हैं।

ऐतिहासिक सत्यता के निर्माण के लिए वर्मा जी ने कहानी से सम्बन्धित किलों, स्थानों, ग्रामों, प्राचीन हस्त लिखित ग्रन्थों, विविध इतिहासों तथा किंवदन्तियों से सहायता ली है। इन्हें पढ़कर प्राचीन युद्धों की स्मृति सजग हो जाती है। ऐसा प्रतीत होता है, जैसे हम अन्तर्जगत् में कोई नाटक देख रहे हों। 'गढ़ कुण्डार' चौदहवीं शताब्दी के बुन्देलखण्ड की राजनैतिक उथल-पुथल को तरोताजा बनाता है, तो 'विराटा की पद्मिनी' मुगल साम्राज्य के अन्तिम दिनों को मानस-पटल अंकित कर देती है।

युद्धों एवं आखेटों के वर्णन में वर्मा जी को स्वाभाविक दिलचस्पी है। वे घूमने-घामने और यात्रा के प्रेमी हैं। शिकार खेलते और ग्रामीण प्रदेश में रहते हैं। अतः ग्राम्य वातावरण एवं विशेषतः बुन्देलखण्ड की संस्कृति का प्रमाणिक चित्रण कर सके हैं।

घटना बहुलता:—

वर्मा जी घटना प्रधान उपन्यास लेखक हैं। ऐतिहासिक उपन्यासकार प्रायः इतिहास प्रसिद्ध बड़ी घटना की पृष्ठभूमि पर अपना कथानक खड़ा करता है। ✽ इसके लिए वह अनेक छोटी छोटी घटनाओं का योग कर मूल कथानक को रोचक बनाता है। वर्मा जी ने समस्त युग का बुन्देलखण्ड, ग्वालियर, भौंसी इत्यादि का इतिहास लेकर अपने प्रमुख पात्रों का चुनाव किया है। इनके उपन्यासों में

प्रमुख पात्रों को छोड़कर अनेक गांव पात्रों का प्राधान्य है। उन गाँव पात्रों के सम्बन्ध में अनेक छोटी बड़ी घटनाओं का जोड़ दिया जाता है। पात्रों की धर पकड़ घटनाओं की धमालकड़ी निरन्तर उसी प्रकार चलती रहती है, जैसे स्टेज पर कोई न कोई अभिनेता कार्य व्यापार में संलग्न होता है। यही कारण है कि इनकी उपन्यास कला में नाटकीयता की मात्रा अधिक है अर्थात् घटनाओं से पूर्व ये उपन्यास पाठक का मन उलभाये रहते हैं। उपन्यास में चलनेवाली विभिन्न धाराओं, कथा सूत्रों का संचालन बड़ी कुशलता से चलता रहा है। कहीं युद्ध है, तो कहीं सामन्तो, राजाओं की प्रेम कहानियाँ, ग्रामीणों के झगड़े, शिकार, वीरता, रण कौशल, मैनों के शौर्य, नर्तकियों नटों, जामूसी विभाग के व्यक्तियों के अद्भुत कार्य। कहीं गांधी युग की राष्ट्रीय जागृति के इतिहास, स्वाधीनता संग्राम की उथल पुथल का ले लिया गया है। 'भाँसी की रानी लक्ष्मीबाई' में देश काल का चित्रण का ले लेने के कारण घटनाओं का बाहुल्य है। इन घटनाओं में देश में व्याप्त विविध प्रवृत्तियों पर प्रकाश पड़ता है।

इतिहास की प्रमाणिकता—

वर्मा जी उपन्यास लिखने में पूर्व कथानक की पृष्ठभूमि में प्रयुक्त इतिहासिक काल का विस्तृत अध्ययन करते हैं, प्रमाणिक ऐतिहासिक ग्रन्थों से इतिहासकारों के मत लेकर स्वयं अन्तिम निर्णय करते हैं। उपन्यासों में आये हुए सभी प्रमुख चरित्र कुछ को छोड़कर—ऐतिहासिक अनुसंधान की भित्ति पर ठहराये गए हैं। कहीं-कहीं आपने

❀ श्री हरस्वरूप माथुर एम० ए० की सम्मति देखिये—

“रोमांटिक उपन्यास घटना प्रधान होते हैं। लेखक के पास एक सुस्पष्ट कहानी की रूप रेखा या कहानी का होना नितान्त आवश्यक है। ज्यूमा, स्काट और वर्मा जी के पास कहने के लिए एक कहानी है। श्री कन्हैयालाल मुंशी के ऐतिहासिक रोमांसों में घटना प्रधान कहानी प्रमुख है। वर्मा जी के उपन्यासों में भी यही विशेषता (घटना प्रधानता) है।”

किम्बदन्तियों का भी उपयोग किया है; किन्तु उन्हें सदा यह ध्यान रहा है कि कहीं ऐतिहासिक वास्तविकता (Realism) की हत्या न हो जाय । कुछ चरित्रों के विषयों में प्रचलित दोहों, मन्दिरे, मङ्गलों चिचों, मूर्तियों को कल्पना के स्पर्श से चरित्रों में उभारा गया है । 'मगनयनी' का मानसिंह कल, संगीत, शिल्प, चित्रकारी का प्रेमी है । 'भांसी की रानी' में भारत का १८५६ के आसपास का देश राजनैतिक, सामाजिक, सामन्त युगीन परिस्थितियों का चित्रण है । यों तो 'भांसी की रानी' लक्ष्मीबाई की कथावस्तु प्रख्यात है किन्तु वर्मा जी ने प्रमाणिक ऐतिहासिक आधारों पर तत्कालीन परिस्थिति और वातावरण का चित्रण किया है । लक्ष्मीबाई के जन्म से पूर्व समग्र भारत में अंधकार, निराशा, अव्यवस्था और दुर्भाग्य राजाओं तथा नवाबों का विलास और शृंगार पियता, चारित्रिक पतन, अंग्रेजों का क्रमशः बढ़ता हुआ आधिपत्य, जनता का असंतोष, स्वतन्त्रता के लिये प्रयत्न, लक्ष्मीबाई का उदय एवं नेतृत्व — प्रमाणिक इतिहास के आधार पर खड़े किए गए हैं । भांसी ही नहीं, वर्मा जी ने समग्र भारत की देश व्यापी परिस्थिति पर प्रकाश डाला है । अपने उपन्यासों में प्रयुक्त सामग्री को अधिक से अधिक प्रमाणिक बनाने में आपने विशेष ध्यान दिया है ।

वर्मा जी ने इतिहास की प्रमाणिकता और सत्यता का इतना अधिक ध्यान रखा है कि कहीं-कहीं पाठकों को यह भ्रम हो जाता है कि वे उपन्यास पढ़ रहे हैं, या इतिहास ? 'भांसी की रानी' लेखक की १४ वर्ष की ऐतिहासिक खोज की छानबीन के परिणाम-स्वरूप लिखा गया है । अतएव ऐतिहासिक दृष्टि से इसका महत्त्व असन्दिग्ध है, परन्तु कुछ आलोचक इस उपन्यास का इतिहास-ग्रन्थों की श्रेणी में रखना अधिक पसंद करते हैं । लेखक तत्कालीन भारतीय राजनैतिक स्थिति के प्रति कहानी की अपेक्षा अधिक जागरूक हो गया है ।

मध्य में कहीं-कहीं शुष्क ऐतिहासिक विवेचन के आ जाने से प्लॉट का आकर्षण कम हो जाता है और तन्मयता एवं उत्सुकता का प्रवाह टूट जाता है। इन चित्रणों पढ़कर तत्कालीन सामाजिक एवं राजनैतिक दशा का अच्छा ज्ञान हो जाता है, पर उपन्यास सरीखा आकर्षण कम हो जाता है।

कहीं-कहीं स्थानीय इतिहास के अतिरिक्त समग्र भारत की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर दृष्टि डालने की चेष्टा की गई है। इसमें इतिहास का प्रतिबिम्ब आश्चर्यजनक रूप में दीख पड़ता है, पर पाठक निरन्तर यह सोचता है कि यह शुष्क विवेचन अब समाप्त हो, अब समाप्त हो। वह इसमें रम नहीं ले पाता। वर्मा जी ने भूमिकाओं में सहायक इतिहास पुस्तकों कुछ प्रलेखों (Documents) और प्राचीन उल्लेखों (Records) का भी उल्लेख कर दिया है। यह उनकी इतिहास की सत्यता का प्रमाण है।

बुन्देलखण्ड की जीवन के मार्मिक चित्रों का उद्घाटन

बुन्देलखण्ड के जीवन, ऐतिहासिक, किलों, भीतरी स्थानों, मंदिरों, गढ़ियों, चित्रकारी, पुराने महलों, समीप के जंगलों, प्रसिद्ध नगरों तथा तीर्थ स्थानों, संस्कृति और भाषा के प्रति वर्मा जी के हृदय में अत्यधिक अनुराग है। आपके अधिकतर ऐतिहासिक उपन्यास बुन्देलखण्ड प्रान्त से सम्बन्धित हैं। कुद्वार की गढ़ी (गढ़-कुण्डार); चन्देरी का किला, छतरपुर की टौटिया, भांसी का किला, भांसी की रानी के महल की चित्रकारी, नरवर का किला, धामोनी का किला तथा अनेक बुन्देलखण्ड के स्थानों तथा प्राकृतिक दृश्यों, जंगलों, वृक्ष और बावड़ियों का बड़ा सजीव चित्रण किया है। ऐतिहासिक, भांगोलिक, आर्थिक अवस्थाओं तथा सामन्ती युग को वर्मा जी ने जीता-जागता प्रस्तुत कर दिया है। इनके उपन्यासों का अध्ययन कर

बुन्देलखण्ड की महत्ता, अतीतकालीन शौर्य तथा वहां का जीवन स्पष्ट हो जाता है ।

वर्मा जी ने स्वयं लिखा है—“आप कभी बुन्देलखण्ड के भीतरी स्थानों पर चले हों, तो आपको स्मरण होगा कि हमारा यह दग्द-खण्ड कितना विभूतिमय है । हम लोगों के पास पैसे नहीं हैं, परन्तु हम लोग फिर भी फागें और गछरे गाते हैं, अपनी भीलों और नदी नालों के किनारे नाचते हैं और अपनी रंगीली कल्पनाओं में मस्त हो जाते हैं । हमारे यहां हाल में एक ‘ईश्वरी’ कवि हुआ है । इसका नाम भी यही था । इसकी फागें प्रसिद्ध हैं । गाड़ीवन, चरवाहां और मल्लाहों से लेकर राजा महाराजा लोग तक उसकी फागों को भूम-भूम कर गाते हैं । बिहारी के दांढों की तरह उसकी फागें भी छोटी-छोटी सी हैं । बहुत सरल भाषा में हैं—आज और रम से आत-प्रोत । प्रत्येक फाग किसी मनोभाव का एक सम्पूर्ण चित्र । ये ही नदिया-नाले, भीलें और बुन्देलखण्ड के पर्वत वेष्टित शम्य श्यामल खेत मेरी प्रेरणा के प्रधान कारण हैं । इसीलिए मुझे Historical Romanee (ऐतिहासिक रोमान्स) पसंद है ।”

बुन्देलखण्ड का इतिहास गौरवमय है । कहते हैं भगवान रामचन्द्र ने इसी भू-भाग के चित्रकूट पर आकर निवास किया था । नागवंश की राजधानी पद्मावती इसी भू-भाग पर स्थित थी नागवंश के पश्चात मौर्य वंशीय अशोक, सुगवंशीय अग्निमित्र तथा पुष्पमित्र, गुप्त वंश के समुद्रगुप्त, कुमारगुप्त, नरसिंहगुप्त, हूण, तूर्यपणि, चन्देलवंशीय चन्द्र-ब्रह्म से लेकर अमर्दिदेव, पृथ्वीराज, यवनवंश के महमूद गजनवी, कुतुबुद्दीन ऐबक, अलतमश, सिकन्दरलोदी, इब्राहीमलोदी, बाबर, हुमायूँ, अकबर, महाराजा संग्रामसिंह, शेरशाह तथा बुन्देलवंशीय वीरसिंहदेव, चम्पनराम, छत्रसाल इत्यादि वीरों की लीला भूमि यहीं प्रदेश रहा है । वर्मा जी की कला की सफलता इस बात में रही है कि उन्होंने अतीत बुन्देलखण्ड को पुनः जीता जागता प्रस्तुत किया

है। सामन्ती युग हमारे नेत्रों के सामने हरा भरा होकर अपने समस्त वंशव, युद्ध, संघर्षों के रूप में भूल उठता है।

प्रकृति चित्रण की बहुलता

स्वयं जङ्गली जीवन में निकट साहचर्य और शिकारी रुचि के होने के कारण बर्मा जी की प्रकृति के वातावरण में विशेष प्रोत्साहन प्राप्त हुआ है। बुन्देलखण्ड की प्राकृतिक सुषमा तो जैसे आपने अपने उपन्यासों में उड़ेल दी है। इस प्रान्त में प्राकृतिक रमणीयता के साथ साथ उर्वर होने के भी गुण हैं। जड़ी बूटी, कन्दमूल, अन्नादि सभी की प्रचुरता है। बर्मा जी के उपन्यासों में बुन्देलखण्ड के नदी, नद, सरावलों, प्रपातों, वृक्षों, वनों, उपवनों का बड़ा सुन्दर सजीव वर्णन किया है।

“प्रकृति का यह चारु-चित्रण न तो सुनी-सुनाई बातों के आधार पर हुआ है, न पुस्तकों से पढ़कर जूठन को दूसरों के सामने फेंका है और न वर्षा की बहाव, राजप्रामाद के प्राँगण में बैठफट्कारों के उछलते रूप में देखी है। उन्होंने प्रकृति के चरणों में बैठ, उसकी गोद में लाट, और उसके मनोहर मुख के सामने बैठ उसको ध्यान पूर्वक निहारा है। अपनी आंखों से, अपनी ही ऐनक से। दुन्नाली को कंधे पर सुलाकर बे जङ्गल या पहाड़ पर पहुँच जाते हैं। बे वन जहाँ दिन के प्रकाश में भी उल्लू खेलते हैं, बे सरिताएँ जो प्रेमी पापाण हृदयों की निष्ठुरता की उपेक्षा कर आगे बढ़ जाती हैं, बे ऊँची पर्वत श्रेणियाँ जहाँ बादल-बिजली आंख मिचौनी खेलते हैं, बर्मा जी की तीर्थ भूमियाँ हैं। घंटों जहाँ सुधदुध खोकर समाधिस्थ होकर उस सुन्दरी का अप्रतिम लावण्य अपलक नयनचलकों से पीते नहीं अघात। दाँयें-बाँये से ऊपर-नीचे से चरणों में नतमस्तक हो, गोद में उछलन-उछल कर, वक्षस्थल में अलिङ्गन बढ़ हो, कन्धों पर सवार हो

अनेक दृष्टियों एवं दिशाओं से आन्तरिक एवं बाह्य छवि को देख-देख पुर्लंकित होते हैं ।

बर्मा जी के प्रकृति चित्रण के कई रूप हैं—(१) कहीं अत्यधिक विस्तार है, तो कहीं (२) दो चार वाक्यों में ही चतुरता से सम्पूर्ण दृश्य को चित्रित करने के प्रयत्न हैं (३) वस्तुओं की सूची मात्र प्रस्तुत न कर, उसके वातावरण का प्रभाव भी अंकित किया है (४) सूक्ष्मता से गहराई तक पहुँचते हैं (५) प्रकृति का प्रसन्न मृदुल आह्लादकारी तथा प्रलयकारी, अन्धकारमय, गैर रूप—दोनों ही में सफलता प्राप्त की है (६) प्रकृति और मानव का समन्वय कराया है (७) प्रकृति के गत्यात्मक चित्रण में आपको विशेष सफलता प्राप्त हुई है ।

यथातथ्य सूक्ष्म विश्लेषण प्रधान प्रकृति चित्रण की दृष्टि से 'बिराटा की पद्मनी' सबसे सफल रचना है । इसमें प्रायः सभी प्रकार के उदाहरण उपलब्ध हो जाते हैं । एक उदाहरण लीजिये और इसके सूक्ष्म वर्णन (Detailed and minute description) पर विचार कीजिए—

“बिरवाई से लगे हुए तीन चार सहुबे के पेड़ थे । सहुआ के पीछे से एक चक्करदार नाला निकलता था । दूमरी ओर वह पहाड़ी थी जो भुसावली पाटा कहलाती है । एक ओर बीहड़ जंगल अहीर की कुछ भैंसें नाले के पास चर रही थीं । एक लड़का कुछ धूप में, कुछ छाया में सोता हुआ जानवरों की देखभाल कर रहा था । घास आधी हरी आधी सूखी थी । करघई के पत्ते पीले पड़ पड़ कर गिरने लगे थे । नाले का पानी अभी नहीं सूखा था—कुछ भैंसें उसमें लोट लोट कर शब्द कर रही थीं । चिड़ियाँ इधर से उधर उड़कर शोर कर रही थी । सूर्य की किरणों में कुछ तेजी और हवा में थोड़ी उष्णता आ गई थी ।”

—(बिराटा की पद्मनी)

वीभत्स अन्धकार तथा कालिमा के चित्र बड़े रौद्र बन पड़े हैं। 'मृगनयनी' जब चारों ओर से लाग्नी की गद्दी शत्रु से घिरी हुई थी, वह रात में उठी। उसने देखा—

“अतुल अन्धकार। निविड़ वन का कोई भी अंश नहीं दिख-
लाई पड़ रहा था। ऊपर तारे छिटके हुए थे। दूर की पहाड़ियां लम्बी
तानें साती मी जान पड़ती थीं। टेढ़ी तिरछी बहती हुई मांक नदी
की पतली रेखा जम्बर भाई सी मार रही थी। दूरी पर घेरा डालने
वालों के डेरे की आग सुलग सुलग कर राई गद्दी के संकट को जगा
जगा दे रही थी। वैसे राई की डांग में नाहर इत्यादि जंगली जानवर
रात में प्रायः बोला करते थे, परन्तु आक्रमणकारियों की गोदा गोदी
के मारे वे बहुत दूर खिसक गये थे। मिषाय भांगुरों की चीं चीं के
और कुछ सुनाई नहीं पड़ता था। सुनसान को छेदती हुई कभी कभी
गद्दी के भीतर “जागते रहो ! जागते रहो !!” की पुकारें भर सुन
पड़ती थीं।”

—‘मृगनयनी’ पृष्ठ ४६२

‘गढ़कुण्डार’ का एक अन्धकार पूर्ण वर्षा कालीन भयानक प्राकृ-
तिक चित्रण इस प्रकार है.—

“पानी के किनारे एक घास के टीले के सहारे टिक कर वह पलो
थर की पहाड़ी के विकट सुनसान सौन्दर्य को देखने लगा। इससे
पहिले दिबाकर बुझती लौ के अनेक मनोहर पर्वत, भील, वन और
नदियां देख चुका था, परन्तु एक ही स्थान पर प्रकृति की ऐसी भया-
नक छटा देखकर उसका चित्त मस्त हो गया। उसने अपने आप से
कहा—“इस सुन्दर बेश के लिये प्राण देना बड़े गौरव की बात
होगी।”

वर्मा जी के प्राकृतिक वर्णन सजीव जीते जागते हैं। कहीं कहीं
तो वे प्राकृतिक सौन्दर्य के चित्रण में अपने आप को पूर्ण विस्तृत सा
कर बैठे हैं। उन्होंने प्रकृति को अपनी आंखों से देखा और चित्रित
किया है, किसी रूढ़िवादी परम्परा से प्रभावित नहीं हुए हैं। जंगलों

की छोटी से छोटी वस्तु भी उनकी दृष्टि से नहीं छिपी है। जंगली जानवरों, चित्रमयी पर्वत घाटियाँ, नदियाँ, नाना ऋतुओं प्रकृति के क्रिया कलाप अत्यन्त सजीवता से चित्रित हुए हैं ! पक्ति-पंक्ति में प्राण है, हृदय का स्पन्दन है। वर्मा जी ने भौगोलिक सचाई और वास्तविकता का विशेष ध्यान रखा है।

‘गढ़ कुण्डार’ और ‘विराटा की पद्मिनी’ के वातावरण की सचाई वास्तविकता और सूक्ष्मता का रहस्य समझते हुये वर्मा जी ने अपने एक मित्र से कहा था, ‘जब फुरसत होती है, बन्दूक लेकर निकल जाता हूँ। दो-दो चार-चार दिन जंगलों पहाड़ों में घूमता रहता हूँ। वहाँ जो दृश्य पसन्द आता है, कागज़ पर उसका शब्द चित्र खींच लेता हूँ। ‘गढ़ कुण्डार’ का अधिकाँश तो कुण्डार के दुर्ग के चारों ओर चक्कर काट कर लिखा है। ‘विराटा की पद्मिनी’ लिखने के लिये कई बार खजुराहो हो आया हूँ। उसके भी कई परिच्छेद वहीं लिखे गए हैं।’

इसी सम्बन्ध में उनके उपन्यासों में आये हुए शिकार के दृश्यों के सम्बन्ध में निर्देश करना अप्रासंगिक न होगा। ‘मृगनयनी’ में गाँव में रहने वाली निन्नी, लाखी और अटल तथा गाँव के समीप के पहाड़ियों, नदियों एवं जङ्गलों में तीर से आखेट के अनेक सजीव चित्र मिलते हैं। मानसिंह तोमर शिकार का एक विराट आयोजन कर राई ग्राम में जाता है। आस पास के जंगलों से हँकाई करने वाले आते हैं। घने पहाड़ी जंगल में एक स्थान पर मानसिंह अन्य शिकारियों के साथ बैठ जाता है। लेकिन निन्नी और लाखी सचान पर नहीं बैठतीं। वे नीचे ही लक्ष्य बंध कर नाहर और अरने का शिकार करती हैं। इस हँकाई, शिकार तथा वहाँ के वातावरण का वर्मा जी ने बड़ी सजीवता और सचाई से प्रस्तुत किया है।

क्या कारण है कि जंगलों के वातावरण, जंगली जीवन, तथा शिकार के चित्र खींचने में वर्मा जी को यह अद्भुत सफलता प्राप्त हुई है ? इसका उत्तर स्वयं उनके एक पत्र में मिल जाता है:—

“...मैं शिकारी रहा हूँ। १९३७ की बात है। फाग भोर की दोज थी ब्रेतवा नदी में, एक उबड़खावड़ स्थान चुन कर रात भर के लिए एक शिकारी मित्र के साथ रह गया। हम लोग जंगली जानवरों की ताक में रात में देर तक जागते रहे। फिर ऐसे सोये कि मेरे शिकारी मित्र शौच के लिये ७ बजे तक एक फर्लांग दूर चले गये और मैं ८ बजे तक सोता रहा एक पहाड़ी टोर की छाया में। काफी थूप निकल आई थी। यकायक खुरियों की आहट से आंगव खुल गई। देखा, चार बनेले सूअर नदी में उतर रहे हैं। वैसे ही आंगव मीड़ते मीड़ते मैंने एक पर बन्दूक दाग दी। उधर बन्दूक का दागना कि उधर दाँगे बाँगे दो सुअर मेरे विस्तरों पर आगए। एक क्षण का विलम्ब होता तो ये सतरे आपको पढ़ने को न मिलती—और अब तक लोग शायद मुझ को भूल भी गए होते। मैंने तुरन्त बन्दूक चलाई। उस सुअर का वीभत्स मेरे कपड़ों पर फैल गया—एक तो थोड़ी दूर जा कर गिर गया, दूसरा भाग गया।”

इस पत्र में उनकी शिकार के प्रति अभिरुचि, प्रकृति से निकट साहचर्य, जंगली जीवन की कठिनाइयाँ, भयानकता, उनका साहस एवं रुचि स्पष्ट हो जाती है। जिस व्यक्ति ने बीहड़ जंगलों में जाकर नदी, नाले, खड्ड, पर्वतों पर घूम-घूम कर प्रकृति को समस्त रूपों में देखा है, उसकी सुन्दरता और कोमलता का देखकर अह्लादित हुआ, कभी उसकी भयानकता पर मुग्ध हुआ है, वह क्यों न उसका सजीव चित्रण करेगा ? उनके कुछ दृश्य तो ऐसे सजीव हैं मानों स्वयं प्रकृति ने बोल कर लिखाये हो ! उनकी ममता बुन्देलखण्ड की लता, वृक्ष, पुष्प, खगभृंग, सुआ, अरनो, नाहरो तक से रही है। प्रकृति रानी की शोभा, नवीन सुपमा और मधुरिमा उनके अनेक दृश्यों में अक्षय रूप से संचित हैं। मुसकाती, इठलाती, प्रसन्नता बरसाती हुई प्रकृति का एक मुग्धकारी चित्रण देखिए—

“चैत लग गया था। बसन्त ने पत्थरों और कंकड़ों तक पर फुल-वाडियाँ पसार दी थीं। टेसू के फूलों ने क्षितिज का सजा दिया।

समीर और प्रभंजन में भी सहक समा गई। रात और दिन संगति में पुलकित हो उठे।”
—विगटा की पद्मनी

जंगलो में मिलने वाले पशुओं के पद चिह्नों, उनके क्रिया कलाप, आदतों के वर्णन में सूक्ष्मता है। ये वर्णन वही व्यक्ति कलम की गह कागज पर उतार सकता है, जिसने अरनों, सुअर, घोंड़ों तथा अन्य जानवरों के खुदों का गहराई से निरीक्षण किया है। ये दुपहरी में चिल्लाती हुई टिटहरी की ध्वनि ही नहीं सुनते प्रत्युत मछली के जल में उछलने का शब्द भी सुन लेते हैं।

आदर्शोन्मुख यथार्थवाद

ऐतिहासिक उपन्यासकार को निरपेक्ष और अपने दृष्टिकोण को सर्वथा तटस्थ रखना होता है,। उसे देशकाल और अपने कथानक में सम्बन्धित पात्रों के चरित्रों की ऐतिहासिक सचाई का विशेष रूप से रक्षा करनी होती है। ऐतिहासिक उपन्यास के कथानक का केन्द्र किसी इतिहास प्रसिद्ध व्यक्ति का जीवन वृत्त एवं उसके कार्य व्यापार होते हैं, किंतु कल्पना के सहज स्पर्श से वह प्रामाणिक पात्र लाकर सूखे इतिहास की अस्थियों में प्राण संचार करता है। इन गौण पात्रों, प्रामाणिक वस्तु का आयोजन एवं विस्तार से कथानक रुचिकर सुसंगठित और आकर्षक बन जाता है।

वर्माजी यथार्थवाद के पुजारी हैं। उन्होंने इतिहास का गहन अध्ययन कर अपने प्रमुख पात्रों के जीवन, चरित्र के गुण, कार्यों की रूपरेखाएँ और वातावरण की सृष्टि की है। लोक प्रचलित किंवदन्तियों तथा जनता के मतों को भी समझ वृक्ष कर उपन्यासों में प्रयुक्त किया है। सत्य की खोज करना उनका प्रधान लक्ष्य रहा है। जैसा प्रामाणिक इतिहास ग्रन्थों में मिलता है— उस सत्य रूप को आकर्षक ढङ्ग से प्रस्तुत कर अपने यथार्थवादी दृष्टिकोण का परि-

चय दिया है। उनकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का निर्माण वर्षों के अध्ययन, तत्सम्बन्धी स्थानों के भ्रमण और नाना इतिहास ग्रन्थों के मनन से हुआ है। सामन्ती युग की अपने समस्त सौन्दर्य और संघर्ष में वे चित्रित कर सके हैं।

उनके उपन्यासों में इतिहास में वर्णित नाना-प्रकार के अच्छे बुरे दैवी आसुरी प्रवृत्तियों वाले पात्र हैं। उच्च स्तर के व्यक्ति हैं, तो निम्न स्तर के पशु कोटि के पात्र भी हैं।

‘मृगनयनी’ में वर्णित मानसिंह, अटल, बैजू निन्नी, लाखी आदि सात्त्विक गुणों वाले वीर धीर उच्च चरित्र वाले व्यक्ति हैं, ता जन पीड़न करने वाले वामना के अन्धे नर-पशु भी हैं। गुजरात के महमूद बघरा के अगणित रक्तपात, मालवा में गयासुद्दीन खिलजी और उसके उत्तराधिकारी नसीरुद्दीन की अत्याचार-प्रियता और अय्यासी, पठान सरदारों की लूट-खसाट, नसीर की १५ हजार बेगमों, वामना के उद्दीप्त पिल्ली—ये सभी पात्र निम्न कोटि के हैं। इसी प्रकार ‘भांसी की रानी’ में लक्ष्मीबाई, सुन्दर, मुन्दर, काशी, मोतीबाई के चरित्रों में भारतीय नारी के उच्चतम गुण, वीरता, रमणी सुलभ भावुकता, कामलता, संयम प्रस्तुत किया है; तो दूसरी और पीरअली दूषित मनोवृत्ति का एक नमूना है। ग डैन, एलिम, मालकम डलहौजी और ह्यूराज सभी अंग्रेज पात्र भारत तथा यहां के व्यक्तियों से घृणा करने वाले हैं। गंगाधरगाव पहले हमारे सामने दुर्बल, विलासी और क्रूर शासक के रूप में हमारे समक्ष आता है। ‘कचनार’ में कचनार दिलीप उच्चतम गुणों से विभूषित है, तो मानसिंह, कलावती, ललिता आदि गिरी हुई मानवता के प्रतीक हैं। इस गुणदोष-मयी सृष्टि की तरह अच्छे बुरे, गुणी दोषी, देवता पापी, वीर और कायर सभी तरह के व्यक्ति इनके संसार में हैं। सभी के चित्रण में बर्माजी ने गहन मनोवैज्ञानिक अन्तर्दृष्टि का परिचय दिया है। ये सभी उनकी यथार्थवादी दृष्टिकोण के ज्वलन्त प्रमाण हैं।

किन्तु कोरे यथार्थवादी चित्रण से बे मन्तुष्ट नहीं हैं। उनके कुछ चरित्रों में एक ऐसे आदर्शवाद की प्रतिष्ठा की गई है जो जीवन की व्यवहारिकता से ओत-प्रोत होकर नैतिक दृष्टि से जनता के लिए कल्याणकारी है। कचनार, लक्ष्मीबाई, मृगनयनी, लाखी, मानसिंह, दिलीपसिंह आदि अनेक पात्रों में भारतीय सांस्कृतिक दृष्टिकोण को प्रमुखता दी गई है। भारतीय ऐतिहासिक वीर, चरित्रवान, उच्चवृत्ति के शासक सन् वृत्तियों के व्यक्तियों के आदर्श चरित्रों की ऐसी प्राण-प्रतिष्ठा की गई है, जो ऐतिहासिक सत्य से ओत-प्रोत होते हुए भी व्यवहारिक है। प्रायः किसी न किसी स्त्री पात्र के आदर्श जीवन की भांकी मिलती है। अधिकांश उपन्यास नारी गौरव की ही गाथाएँ हैं।

‘मृगनयनी’ में निन्नी और लाखी के चरित्र छोटी मोटी कमजोरियों के होते हुए भी सत्य, प्रेम, निष्ठा, दृढ़ता, वीरता और साहस में उज्ज्वल प्रकाश स्तम्भ की तरह खड़े हैं। मानसिंह की कलाप्रियता, प्रजावत्सलता, धीरता और शौर्य आदर्श है। झांसी की रानी, मे मातृत्व और पत्नीत्व के दोनों आदर्श उतारे गए हैं। लक्ष्मीबाई एक वृद्ध विलासी पति पाने पर भी अनुरागिनी, पतिव्रता, वीर साहसी और नीति निपुण हैं। आचरण की उच्चता देशभक्ति, स्वातन्त्र्य प्रेम दृढ़ता, आत्मविश्वास आदि सम्पूर्ण देवी विभूतियाँ उसमें केन्द्रित की गई हैं। ‘कचनार’ में दिलीप और कचनार का वासना रहित प्रेम उनका अत्मबलिदान, कष्ट, सहिष्णुता, परस्पर एक दूसरे की सहायता वृत्ति, साहस और धैर्य आदर्श हैं। इसी प्रकार के अनेकों पात्र एक व्यवहारिक आदर्शवाद से ओत-प्रोत हैं। ये पाठक के मन पर अपना कल्याणकारी प्रभाव छोड़े बिना नहीं रहते। भारतीय आदर्शों के साथ-साथ जीवन की समस्त स्वाभाविकता उनके उपन्यासों में प्रतिष्ठित है।

‘उन्होंने भारतीय इतिहास सर्व प्रथम दृष्टि उन्मुख करके प्राचीन संस्कारों को जगाया है। उनके हृदय की विशालता में अतीत-

गौरव का सरल-सत्य समाया हुआ है। दृष्टिकोण स्वस्थ, सरल और स्पष्ट है तथा उन्होंने अपनी वैयक्तिक अनुभूतियों को व्यापक—जीवन की समग्रता में समाहित कर दिया है—‘‘उन्होंने अतीत के कथानकों के भ्रमों से जो पुरातन भारतीय संस्कृति की शाश्वत भाँकी मिलती है, वह प्रत्येक जिज्ञासु को इतिहास का सर्म समझने और अतीत की महानता से पुलकित होने का अवसर प्रदान करती है।’’ १

‘‘आपके अधिकांश पात्र किसी न किसी आदर्श की ओर जाते और दूसरों के लिए पगडंडी बनाने दिग्दर्श देते हैं—जैसे आदर्श की ओर जिसका नित्य के जीवन में सम्बन्ध है, इस धरती पर चलने फिरने वाले आदमी जिसे पकड़ सकते हैं। यह आदर्श कोई स्वर्गीय, अव्यवहारिक नहीं है। यह वह आदर्श है, जिस पर चलकर मानव यथार्थ मानव कहला सकता है; वह पशुता की श्रेणी से मानवों की पंक्ति में आ बैठने योग्य होता है। लेखक का यथार्थ आदर्शवाद की ओर उन्मुख है। यथार्थ के द्वारा आदर्श की ओर संकेत कर के जीवन को गतिशील बनाने की प्रेरणा दी है। जीवन के प्रति यही उनका अपना दृष्टिकोण है।

वर्माजी ने यथार्थ एवं आदर्श का कलात्मक समन्वय प्रस्तुत किया है। उनका आदर्श यथार्थ पर इतना नहीं चढ़ गया है कि अस्वभाविकता आ जाय, न यथार्थ इतना हट गया है कि व्यवहारिक न हो। उन्होंने यथार्थ को समाज और व्यक्ति के लिए कल्याणकारी संगलमय रूप में प्रस्तुत किया है। कर्तव्य और कलाप्रियता; वीरता और प्रेम, यथार्थ और आदर्श का सर्वत्र संतुलन रखा है। प्रेम, युद्ध और सतत उथल-पुथल के मध्य रह कर भी हम उनके आदर्शवादी चरित्रों से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकते।

१ श्रीमती शचिरानी गुट्टे ‘साहित्यदर्शन’ पृष्ठ ३२०

२ प्रो० रामलालजी साँवल एम० ए०

सामाजिक समस्याओं का चित्रण

ऐतिहासिक होते हुये भी वर्मा जी के उपन्यासों में यत्र-तत्र समाज की नाना समस्याओं को उठाया गया है और विवेचन के पश्चात् एक मत दिया गया है। ये समस्यायें गौण रूप से होने पर भी बड़ी दिलचस्पी से उपन्यासों के कथानकों में गुथी हुई है। अपनी कला के चमत्कार से वर्मा जी ने इन्हें बड़ा रोचक और दिलचस्प बना देते हैं, दोनों पक्षों में जो कुछ कहा जा सकता है, वह भी चतुराई से पात्रों के कथोपकथनों द्वारा प्रस्तुत कर दिया जाता है।

“मृगनयनी” में जाति पाति की सकीर्णता तथा तज्जनित जटिलताओं, कण्टों और अन्याओं पर प्रकाश डाला गया है। जाति-पाति के ठेकेदार जिस बात के लिये बड़े व्यक्तियों की ओर उंगली नहीं उठा सकते, वह जब छोटे स्तर के व्यक्तियों में होते हैं, तो उन्हें भरपूर सजा देने में नहीं चूकते। समाज और धर्म के इन ठेकेदारों ने समाज को जितनी हानि पहुंचाई है, उतनी युद्धों ने नहीं।

‘मृगनयनी’ में अटल और लाखी—अहीर और गूजर जाति-पाति विरादरी की परवाह न कर विवाह सूत्र में बंधना चाहते हैं; राजा मानसिंह निम्न जाति की कन्या निन्नी से विवाह कर चुका है। उसके विवाह सम्बन्ध में लोक मत को कुछ टीका टिप्पणी करने का अधिकार नहीं है। पुजारी और ज्योतिषी, गांव वाले विरादरी कोई कुछ नहीं कर सकता (समर्थ को नहीं दोष गुमाई) लेकिन जब वही बात अटल और लाखी करना चाहते हैं, तो रूढ़िवादी समाज की नांक भौं चढ़ जाती हैं। ‘मृगनयनी’ का एक प्रसंग देखिये—

अटल पुजारी के पास चला गया। उसे आशा थी कि राजा का साला होने के कारण पुजारी अविलम्ब मुहूर्त निर्धारण पुजारी ने अटल के अनुरोध पर हुआ नहीं।

“मैं राज्य को छोड़कर परदेश चला जा सकता हूँ, परन्तु वर्णाश्रम धर्म को लान नहीं मार सकता । मैं ऐसा नहीं कर सकता कोई ब्राह्मण नहीं कर सकता ।”

“तो हमारे छोटे घराने की लड़की को छत्तीस कुरी वाले के साथ क्यों व्याह दिया ?”

“वह राजा है । राजा किसी देवता का अवतार होता है, वह कर सकता है । उसको सब सुहाता है, तुम लांग राजा नहीं हो, तुम्हारे लिये बनाई है तुम यदि हठ करोगे और लाखी को रख लोगे तो जाति के बाहर कर दिये जाओगे गांव का कोई भी नर नारी तुम्हारे हाथ का भूरा छुआ पानी नहीं पीयेगा, तुमको छुयेगा तक नहीं बोल-चाल, काम-काज सब बन्द हो जायेगा ।”

जाति की सकृतिता और विरादरी वालो के भय से बेचारा अटल लाखी को लेकर बनजारों के साथ भाग निकलता है । अन्त-तक यह भय उस पर काल की तरह छाया रहता है । ‘भांसी की रानी’ में भी शूद्रों की स्थिति का विवेचन है । भांसी प्रान्त में ऊँची जाति वाले जिनके हाथ से स्पर्श हुआ भोजन नहीं खाते थे, उन शूद्रों ने जनेऊ पहिनना प्रारम्भ कर दिया था, किन्तु इस स्वच्छन्दता एवं प्रगति का रूढ़िवादी वर्ग विरोध कर रहा था, मन्दिरों में अछूतों का प्रवेश निषिद्ध था; ‘कचनार’ में दहेज में आने वाली दामियों तथा राज के भोग विलास का चित्र भी दे दिया गया है, मजदूरों से बेगार ली जाती थी, ब्राह्मणों की वृत्ति भिक्षा से चलती थी । ब विवाद के शौकीन थे ।

‘कचनार’ में वैधव्य और पुनःविवाह की समस्या को उठाया गया है। दलीपसिंह के मर जाने की खबर फैलने पर मानसिंह राजा बन जाता है, तथा उसकी विवाहिता पत्नी कलावती विधवा का जीवन व्यतीत करने लगती है । वह प्रारम्भ से ही अपने देवर के प्रति आकृष्ट थी; मन ही मन उसे लब्ध दृष्टि से देखती थी । -वैधव्य का साधारण

चित्र कलावती के नेत्रों में आंसू ले आता था, परन्तु उस गिक स्थान में मानसिंह का चित्र विविध रूपों में आ जाता था। विवाह में अनेक सामाजिक बाधाएँ थी। इन रूढ़ियों का उल्लंघन करने में साहस की आवश्यकता थी। अन्त में मानसिंह हिस्मत कर के विधवा विवाह करने का निश्चय करता है। समाज और धर्म के रूढ़ि बन्धन का खण्डन करता है। गोड़ों में विधवा विवाह की प्रथा है, राज गोड़ों में नहीं, यह वह जानता है, परन्तु साहस पूर्वक वह ठाकुरमल्लो को ताड़ता है। बरसी पटा भी एक मास का ही करता है; इसके पश्चात् विधवा विवाह की रस्म पूरी हो जाती है।

‘लगन’ में दहेज समस्या को उभागा गया है। देवसिंह के पिता शिवू ने बगैल के बादल चौधरी के यहां उनकी पुत्री रामा से अपने पुत्र का विवाह किया था। विवाह के समय रामा के पिता ने दहेज में सौ भैंसों देने का वचन दिया था, जिसे न पूर्ण करने पर देवसिंह के पिता ने अपने समधी बगैल के चौधरी को विवाह के समय ही गाली गलौज करके अपने इस नए सम्बन्ध में वैमनस्य का बीज बो लिया था, वहू की बिदा भी नहीं कराई थी और घोपणा की थी कि वे पुत्र द्वितीय विवाह सम्पन्न करेंगे। देवसिंह और रामा की प्रेम-साधना ने केवल पति पत्नी की आकांक्षा ही पूर्ण नहीं की प्रत्युत बगैल और बाटरा के दोनों प्रसिद्ध घरानों को उस संघर्ष में पड़ने से बचा लिया जिसमें उनका सर्वनाश होना अवश्यम्भावी था। इस उपन्यास में जहां दहेज से उत्पन्न वैमनस्य, कटुता, गाली गलौज सम्बन्धी सूखता पर प्रकाश डाला गया है, वहां श्वसुर और वहू की मर्यादा का आदर्श चरित्र भी अङ्कित किया गया है।

कहीं २ साम्प्रदायिक समस्या को भी स्पर्ष किया है। ‘भृगनयनी’ में सिकन्दर ने नरवर का किला जीत लिया, परन्तु क्रोध बढ़ गया। वह किले के भीतर गया और चारों ओर चक्कर काट कर निरीक्षण किया। उसमें कुछ शैव और वैष्णव मंदिर थे, प्रचुर संख्या में जैन मंदिर। जैन मूर्तियाँ शान्त रस की अवतार, शान्ति प्रदान करने

वाली थी। साम्प्रदायिक विद्वेष एवं उत्तेजना में भर कर सिकन्दर ने सौंदर्य और शान्ति के उन प्रतीकों को चूर चूर कर दिया। 'भांसी की रानी' में वर्मा जी ने हिन्दू-मुसलिम एकता से पोषित राष्ट्रीयता का चित्रण किया है। इस उपन्यास में राष्ट्रीयता की भावनाएँ प्रधान हैं। उस समय साम्प्रदायिक भावनाएँ इतनी संकुचित नहीं थीं - नवाब का प्रधान मन्त्री हिन्दू होता था। जो कट्टरता आज हमें दिम्बाई दे रही है, वह अधिक पुरानी नहीं है। लक्ष्मीबाई यवन स्त्रियों के स्वाधीनता के पक्ष में है। ताजियों पर जो तनातनी प्रायः देखी जाती है, लक्ष्मीबाई वह नहीं चाहती थीं। वे हिन्दू-मुसलिम एकता के पक्ष में थीं और उनके लिये मतभेद उद्योग शीला रहीं। गांधी युग के समतावाद की एक झलक यहाँ मिल जाती है।

मनोवैज्ञानिक अन्तर्दृष्टि

वर्माजी की उपन्यासकला की एक विशेषता यह है कि वे पात्रों के गहनतम स्थलों में पैठ कर मनोवैज्ञानिक गहराइयों से पात्रों का चरित्र-चित्रण करते हैं। उन्होंने मानव स्वभाव के उन केन्द्रों का अध्ययन किया है, जहाँ से उनके कार्य प्रारम्भ होते हैं। मानव-मन के विश्लेषण में जिस अध्ययन एवं विमृत्त अनुभव की अपेक्षा है, वह उनके पास प्रचुरता से है। नाना प्रकार के, भिन्न-भिन्न स्वभाव आदतों और वर्गों के पात्र पात्री उनके नेत्रों के सामने से गुज़रते हैं। इन सब को गहराई से परख कर वर्माजी ने उनका चित्रण किया है। यही कारण है कि उनके पात्र कौरी कल्पना के पुतले न होकर भावना, बुद्धि, विवेक, बल, पराक्रम, संस्कृति और कला के प्रतीक हैं। उनमें वही मांस और रक्त है, जो हमारे शरीर में प्रवाहित होता है। उनमें अच्छाईयाँ हैं तो मानव चरित्र की दुर्बलताएँ भी हैं। अपने समस्त गुण दोषों के बावजूद उनके पात्र स्वस्थ, शरीरी और स्वाभाविक हैं।

स्थूल रूप से वर्माजी के उपन्यासों में पात्रों के अन्तःसंघर्ष की अपेक्षा घटनाओं का अधिक महत्व है, किन्तु यत्र तत्र पात्रों के चरित्र चित्रण में मनोवैज्ञानिक शैली का प्रयोग किया है। पात्रों के कार्य कलाप, मन्तव्य; अन्तर्वृत्ति और सेक्स (Sex) भावनाओं का बड़ा गहरा चित्रण उपलब्ध है। वे परिस्थिति का ताना बाना इतना सूक्ष्म बुनते हैं कि उस वातावरण में पात्र सही रूप में प्रकट हो जाते हैं। पात्रों के इर्द गिर्द का वातावरण, पोशाक, रहन-सहन का ढङ्ग, वार्तालाप क्रिया कलाप मात्र से ही वे संतुष्ट नहीं हो जाते, उनके मनोव्यापारों, हृदय की उथल-पुथल, अन्तर्द्वन्द्व का भी प्रकट करते हैं। ऐतिहासिक उपन्यास में भी मनोवैज्ञानिक अध्ययन होने के कारण पात्रों के रंग रूप जैसे निखर उठे हैं। वातावरण निर्माण वे पात्रों को उभारने संवारने में और सहायता दी है।

‘कचनार’ में वर्मा जी मानव-स्वभाव की उलझी हुई गुत्थियों को सुलभाने में लगे हैं। इसमें मानसिंह, दिलीप और कचनार के चरित्रों की गहराइयों, भावों की गहनता, रुचियों की जटिलताओं के विश्लेषण में मनोवैज्ञानिक अन्तर्दृष्टि है। एक प्रकार से पूरा उपन्यास एक मनोवैज्ञानिक भित्ति पर खड़ा हुआ है—‘दिलीप का सर की बड़ी चोट के कारण मौजूदा जीवन तथा घटनाओं को भूलकर नया विकास। वर्मा जी ने दिखाया है कि सर की चोट से कैसे स्मरण शक्ति लुप्त हो जाती है, फिर क्रमशः वह नए रूप में धीरे धीरे क्रमानुसार बच्चे की बुद्धि की तरह विकसित होती है। दूसरे युद्ध में पुनः उसी स्थान पर चोट लगने से अचेत होकर पुनः विमृत जीवन स्मरण हो आता है। इस उपन्यास का आधार स्मरण-शक्ति सम्बन्धी मनो-विज्ञान है। इस उपन्यास में मानसिंह और कलावती का भाभी-देवर का सम्बन्ध होने पर भी यौन आकर्षण, अन्त में विवाह में परिणति सेक्स की जटिलताओं पर प्रकाश डालता है। ‘कचनार’ के चरित्र की गहराई उसके हृदय की पीड़ा और व्यथा-भार मानव-स्वभाव की गुत्थियों पर प्रकाश डालता है।

‘मृगनयनी’ में निन्ती तथा लाखी के आन्तरिक जीवन का क्रमिक विकास, ग्रामीणों के मनोभाव, लीलाएं, पुरान पन्थी, रूढ़ि-वादिता, समव्ययस्क युवतियों के आंतरिक इच्छाएँ, प्रेम का प्रभाव, अल्हड़पन, उन्माद; बोधन पण्डित का अहं, ज्ञान का दम्भ, वाक्युद्ध के उत्पात का मूल, वामना का ताण्डव नट नटनियों का मनोविज्ञान शराबी विलासी वासना में उन्मत्त नसीरुद्दीन की वासना-तृप्ति जाति-पाति की संकुचितता तथा उसका विध्वंसात्मक स्वरूप, संगीत कला चित्रकारी की साधना—इन सभी के विवेचन में व्यक्ति और समाज के संघर्ष के साथ-साथ व्यक्ति और व्यक्ति की कश्मकश, मनुष्य का अन्तर्द्वन्द्व मनोविज्ञानिक पृष्ठभूमि पर चित्रित हुए हैं। वर्मा जी ने सामन्ती युग तथा तत्कालीन नरेशों की सारी मानसिक क्रियाएँ उधेड़ कर रख दी हैं। नायिकाओं का प्रेम निराशा, अतृप्तलालसा, विचारों में परस्पर पार्थक्य, सौतिया डाह को भी व्यक्त किया है।

‘अचल मेरा कोई’ मनोविज्ञानिक उसन्यास है। तीन प्रमुख पात्रों अचल, कुन्ती और सुधाकर की नाना मानसिक क्रिया-प्रक्रियाओं के ताने-बाने से कथानक की सृष्टि की है। इसमें मनुष्य, विशेषतः युवक युवतियों के मानस-उदधि में उत्पन्न होने वाली भावना तरंगों, हास, विलास, आकर्षण, रति, सन्देह, हावभावोंका, मानसिक संघर्ष का विश्लेषण है। अचल और कुन्ती भावुक हैं, अचल का मन सदैव असंख्य विचारों से परिपूर्ण रहता है। अचल के मन में रति-भाव का उदय तथा तत्सम्बन्धी मनोव्यापार कहीं कहीं अति भावुकता से भर गया है; कुछ प्रसंग काव्यमय हो गए हैं। एक उदाहरण लीजिये—

‘साध साध कर, संभाल-संभालकर प्रेम करता रहूँगा, हृदय की गिनी गिनाई गतियों को राई रत्ती तौले हुए वासना प्रसूनों को रेशम की पोटली में गांठ लगाकर बांधे हुये कामना-परिमल को, और मुट्ठी में कैद की हुई लालसा—सुगन्धि को थोड़ा थोड़ा करके कुन्ती पर

न्योद्धावर करता रहूंगा'—अपनी समस्या के हल पर अचल को बहुत तृप्ति हुई ।

अचल अत्यन्त विचारशील युवक है । जैनेन्द्र जी के पात्रों की तरह अनेक से झूबकर अचल बाहरी वस्तुओं और पात्रों के सम्बन्ध में सौचता विचारता है । उसके समस्त मनोव्यापार बड़ी सचाई से कागज पर उतार कर रख दिये गये हैं । दो तर्कों में वर्मा जी जैनेन्द्र जी के सन्निकट आ जाते हैं—(१) दो चार प्रमुख पात्र चुनकर उनके अन्तर्द्वन्द्वों में बैठने की प्रवृत्ति (२) गांधीवाद के प्रति आस्था 'अचल मेरा कोई' उपन्यास में गांधीवाद के प्रबल संस्कारों और प्रेम भाव की जटिलताओं का मनोवैज्ञानिक निरूपण हुआ है ।

वर्मा जी के उपन्यासों में जहाँ मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण उभरा है, भारतीय नारी के अन्तःकरण का सहानुभूति पूर्ण मनःविश्लेषण मिलता है । यह गुण सामाजिक उपन्यासों, विशेषतः 'अचल मेरा-कोई' में पाया जाता है । 'लक्ष्मीबाई' में गानी लक्ष्मीबाई, जुही, काशी, मोतीबाई, 'मृगनयनी' में लाखी, निन्नी और कला; 'कचनार' में कचनार ललिता, मन्ना और कलावती, 'अचल मेरा कोई' में कुन्ती और निशा के चरित्र चित्रण में जहाँ मनोवैज्ञानिक अन्तर्दृष्टि है, वहाँ उपन्यासकार की सहानुभूति भी मिली है ।

आदर्श पात्रों को उभारने के लिये वर्मा जी ने ऐसे खल पात्रों की भी सृष्टि की है, जो मनुष्य की दुर्बलताएँ चित्रित करते हैं । मनोवैज्ञानिक दृष्टि से ऐसे पात्रों का अस्तित्व अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि सत्य-असत्य, सुन्दर-असुन्दर, शिव-अशिव, परस्पर एक दूसरे से सम्बद्ध हैं । 'मृगनयनी' में लाखी और मृगनयनी के चरित्रों की उज्ज्वलता पिल्ली की अवृत्त वासना एवं भ्रष्टता, गुजरात के महमूद बघर्गा तथा नालवा सुल्तान नसीरुद्दीन की विषय वासना वृत्ति दूसरी ओर अटल और मानसिंह की उज्ज्वलता परस्पर एक दूसरे के चरित्रों को उभारते हैं । 'कचनार' में कलावती और ललिता की दुर्ब-

लताएँ कचनार की पतिव्रता, निष्ठा, आत्मबलिदान और आदर्श-वादिता को ऊँचा उठाती है। दिलीप और मानसिंह के चरित्र सर्वथा विपरीत से हैं। दो सगे भाइयों के चरित्रों में कैसा वैपम्य हो सकता है, यह स्पष्ट किया है। 'अचल मेरा कोई' में भी ऐसे जोड़े आते हैं, जो परस्पर एक दूसरे के चारित्रिक गुणों को उजागर कर देते हैं जैसे अचल और सुधाकर; निशा और कुन्ती।

टेकनीक सम्बन्धी विशेषताएँ

कथानक पटुता—

वर्मा जी कथानक-निर्माण में विशेष पटु हैं। ऐतिहासिक कथाओं के साथ अपने प्रत्येक उपन्यास में रोचक प्रामांगिक कथाएँ भी यत्र-तत्र जोड़ दी हैं। मूल कथानक पेड़ के मांटे तने की तरह सुदृढ़ रहता है और ये रोचक प्रामांगिक कथाएँ मूल कथानक से जुड़ी रह कर दिलचस्पी बढ़ाती हैं और कथा प्रभाव का गतिशील रखती हैं।

मूल कथानकों के निर्माण में आपने इतिहास का आधार लिया है। पृष्ठभूमि और वातावरण निर्माण के लिये देश काल और स्थिति का विशेष ध्यान रखा है। 'भाँसी की रानी' के मूल कथानक निर्माण में वर्षों की खोज, इतिहास का अध्ययन एवं तत्सम्बन्धी तथ्यों का निरूपण हुआ है। वर्मा जी उपलब्ध इतिहासों, चरित्र सम्बन्धी पुस्तकों, व्यक्तियों, परम्पराओं, किंवदन्तियों, पुराने शिलालेखों, चित्रों, महलों खण्डहरों से अपने निष्कर्ष निकाल कर उनका उपयोग करते हैं। जिन कथा—भागों के विषय में इतिहास अस्पष्ट और धूमिल है, उनके विषय में विशेष सतर्कता बरती जाती है। उदाहरण के लिये वर्माजी 'भाँसी की रानी' के विषय में की हुई ऐतिहासिक खोजों का विस्तृत व्योरा प्रस्तक के परिशिष्ट में दे दिया गया है। मूल कथानक के साथ

उसकी सांस्कृतिक, सामाजिक, धार्मिक, नैतिक परिस्थितियों को चित्रित करने का विशेष ध्यान रखा गया है। प्रस्तावना में प्रारम्भिक इतिहास से तत्कालीन उपयोगी सामग्री दी गई है।

‘भगनयनी’ में मानसिंह तोमर की कथानक का आधार बनाया गया है। यद्यपि इसमें सन १४८६ से १४१६ ई० तक के ग्वालियर के इतिहास को विवेचन का विषय बनाया गया है, तथापि तत्कालीन भारतीय राजनैतिक स्थिति पर भी झींटाकशी की है।

‘कचनार’ में धामोनी और मागर के पारस्परिक युद्धों से सम्बद्ध है। इसके मूल कथानक में वर्मा जी ने स्वयं अनुसंधान किए हैं। इसमें तत्कालीन (सन १७६२ से १८०३) राजनैतिक, सामाजिक स्थिति एवं सामन्तीय जीवन पर प्रकाश डाला गया है। इसमें प्रयुक्त सामग्री ‘मागर गजेदियर’, बुन्देलखण्ड का इतिहास और लाल काँच चित ‘छत प्रकाश’ से लिये गये हैं।

वर्मा जी के कथानकों में प्रासंगिक कथाओं का सौन्दर्य है। ये छोट्टी छोट्टी कथाएँ मूल कथानक से संयुक्त कर दी गई हैं। इनमें तरह तरह की समस्याओं को उठाकर उनका समाधान किया जाता है। कहीं इनसे वातावरण चित्रित हुआ है, तो कहीं देश काल का ज्ञान कराया गया है। चरित्र चित्रण में भी इनसे पर्याप्त सहायता मिली है। वर्मा जी की सफलता उनके संगुफन और तारतम्य में है। एक घटना को दूसरी से, दूसरी से तीसरी चौथी को संयुक्त कर एक सूत्रता और तारतम्य बनाये रखा जाता है। ये कथाएँ परस्पर संयुक्त हैं।

‘भांसी की रानी’ में प्रासंगिक कथाओं से तत्कालिक परिस्थिति और चरित्र चित्रण में प्रचुर सहायता मिलती है। इनमें कुछ समस्याएँ भी उभारी गई हैं जैसे—‘भांसी में अवरण हिन्दुओं द्वारा उठाई हुई जनेऊ की समस्या, नारायण शास्त्री की प्रेम कथा, सागरसिंह की वीर कथा, गंगाधरराव द्वारा काशी में राजेन्द्र बाबू को पिटवाने की

घटना— ये तथा अन्य घटनाएँ प्रामाणिक होते हुए भी मूल कथानक को उभारती हैं। 'कचनार' में डरू तथा मन्ना की कथा, महलों का जीवन तथा कार्य, 'मगनयनी' में लाखी और अटल का रोमानी सम्बन्ध; मुल्तान नसीरुद्दीन की पन्द्रह हजार बेगमों की कहानी, गुजरात के महमूद बघर्ग की आदतें, नटनी नटों के साहसपूर्ण कार्य, पिल्ली की मृत्यु—ये सभी घटनाएँ मनोरंजक होते हुए भी चरित्र और परिस्थिति पर प्रकाश डालती हैं।

'गढ़ कुण्डार' और 'विगाटा की पद्मिनी' का हम वर्मा जी का प्रतिनिधि उपन्यास मान सकते हैं। इनमें कथा का गठन और विकास जिम्मे सुचारु रूप में हुआ है, वह सुचारुता, प्रेमचन्द, प्रसाद, या निराला में नहीं मिलती। जहाँ प्रेमचन्द ने प्रभावक्यता का ध्यान नहीं रखा है, वर्माजी सुगठित कथा को पिरोते में दक्ष रहे हैं। वे अपने कथानक में बहुत-सी नाटकीय परिस्थितियों का आयाजन कर उनके द्वारा चरित्र चित्रण भी करते जाते हैं और कानुहल की भी वृद्धि करते जाते हैं। उनके उपन्यासों में किसी घटना का अचानक प्रवेश नहीं हो गया है, बल्कि वह इस प्रकार का वातावरण उत्पन्न कर देते हैं कि उसमें बीज से वृक्ष की भाँति कथा का पूरा विकास क्रमबद्ध रूप में होता चला जाता है। किसी असाधारण घटना का समावेश करने के लिए उन्हें कथा-प्रवाह के बीच रुककर सफाई देने की आवश्यकता नहीं पड़ती, वरन् यह घटना कथा-प्रवाह में स्वाभाविक क्रम के रूप में आता है १”

संक्षेप में, वर्माजी कहानी कहने में पटु हैं। कथावस्तु में जटिलता नहीं रहती। सरल, सुबोध शैली में, नाना समस्याओं पर प्रकाश डालते हुए, वे द्रुतिगति से घटनाओं का वर्णन करते चलते हैं। वे सम्पूर्ण प्लॉट पहिले ही सोच लेते हैं। मन में कथावस्तु की स्पष्टता के कारण उनमें कोई जटिलता नहीं आती। जो समस्याएँ उठाई जाती हैं, उनके लिए आप पात्रों और परिस्थितियों का निर्माण करते

चलते हैं। आपका वस्तु संगठन में अनावश्यक विस्तार नहीं है। कहीं-वहीं इतिहास की घटनाओं का वर्णन अवश्य है, किन्तु उसे निकाल देने पर नीरसता कहीं नहीं है। छोटी-छोटी प्रासांगिक कथाओं को जोड़कर वे राचकता का समावेश कर देते हैं। कथा-विकास में जिज्ञासा और रोचकता का विशेष ध्यान रखते हैं। यही कारण है कि आकार में बड़े-बड़े होने पर भी नाटक की रुचि अन्त तक बनी रहती है। अनेक कथासूत्रों को पकड़ें रख कर प्रत्येक में निजी उत्सुकता बनाये रखना वर्माजी की कला का सौन्दर्य है।

प्रमाणिक ऐतिहासिक कथानक होने पर भी वर्माजी के उपन्यासों में मौलिकता का गुण विद्यमान है। उनके पात्र परिस्थितियों, प्रासंगिक कथायें किसी अन्य लेखक से उधार ली हुई नहीं हैं। मूल आधार पर अनुसन्धान कर वे पात्रों तथा घटनाओं का संशुद्ध स्वयं करते हैं; रेखा चित्रों में उन्हीं की मूलिका के रंग हैं।

श्री हरम्बरूप माथुर एम० ए० के इस कथन में सत्यता है, 'उनकी कथावस्तु मौलिक होती है, साथ ही शैली की भी मौलिकता है; कथा विकास स्वाभाविक एक कलात्मक है; उन्होंने आकस्मिक घटनाओं का सहारा नहीं लिया है ... स्वाभाविक परिस्थितियों की योजना कर उपन्यासकला के ऊँचे स्तर का आदर्श प्रस्तुत किया है।'

चरित्र-चित्रण

वर्मा जी के प्रमुख पात्र तो इतिहास के व्यक्ति हैं, किन्तु उनके साथ आने वाले प्रासंगिक पात्र स्वयं उनके द्वारा विनिर्मित हैं। यथार्थवादी दृष्टिकोण और विस्तृत अनुभव होने के कारण उनके चरित्र-चित्रण में सजीवता है। उनके पात्रों का पृथक् ही अस्तित्व है अपना पृथक् (Individual Personality) व्यक्तित्व है। अपनी आदतों, स्वभाव, मानसिक संघर्षों, आदर्शों में वे पृथक् पृथक् हैं।

मनुष्यों को सूक्ष्म दृष्टि से देख कर का वर्मा जी ने मचाई और सर्जीवता का विशेष ध्यान रखा है। स्वच्छन्द गति और स्वतंत्र व्यक्तित्व ले कर ये पात्र जीवन के स्पन्दन से परिपूर्ण है।

वर्मा जी ने पात्रों की वाह्य आकृति, बेशभूषा, रहन-सहन, व्यवहार, कार्य इत्यादि का गहराई से देखा और चित्रित किया है। उनके पात्रों के रेखाचित्र स्पष्ट हैं। कहीं कहीं तो ब्रश के दो चार स्पर्शों से ही रेखा चित्र बोल उठे हैं। 'मृगनयनी' के रेखा चित्र देखिए कैसे स्पष्ट और संक्षिप्त हैं :—

‘बे दोनों (निन्नी और लाखी) समवयस्क थीं—आयु लगभग पन्द्रह-सोलह वर्ष परन्तु निन्नी बलिष्ठ और पुष्ट काया की, लाखी दुबली और छरंगी। निन्नी गोबर के मत्कार में डरना नहीं चाहती थी।’

‘अटल हटा कट्टा युवक था। आंखें भीग चुकी थीं। सिर के बाल लम्बे थे। इर्मलण सारी आकृति में भीमता आ गई थी। कई साल के कठोर जंगली जीवन ने उसके लम्बे चेहरे की लम्बी नाक को कुछ और लम्बा कर दिया था। अपनी बहिन निन्नी को सुखपूर्वक और सुरक्षित रखने में उसने कोई कसर नहीं लगाई थी। माँ बाप मार डाले थे, अब घर में केवल वे दो ही बचे थे।’

‘मानसिंह कनात को पर्दा हटा कर घुस गया। दुर्लहिन घूँघट खोले थी—रंग गंधुंग से जग ज्यादा गौर, आंखें डड़ी, बरौनियां लम्बी, नाक सीधी, चेहरा गोल। एक सहेली खरे गारे रंग की थी बहुत सुन्दर; दूसरी जरा सांवले रंग की, आंखें बड़ी परन्तु नाक, कुछ चपटी, नथने फूले हुए। दोनों खटोलिया गौड़।’ —कचनार

तुलनात्मक चरित्र-चित्रण में भी वर्मा जी को प्रचुर सफलता मिली है। ‘कचनार’ में कलावती और कचनार; ‘अचल मेरा कोई’ में निशा और कुन्ती, ‘मृगनयनी’ में लाखी और निन्नी के तुलनात्मक चरित्र अध्ययन प्रस्तुत किए गए हैं। ‘कचनार’ का उदाहरण लीजिए—

दुर्लैयाजू का स्वर सारंगी सा मीठा है, कचनार का कण्ठ मीठा होते हुए भी चिनौती-सा देता हुआ। दुर्लैयाजू कमल हैं, कचनार कटौला गुलाब। जिस समय दुर्लैयाजू को हल्दी लगाई गई, मुखड़ा मूरजमुखी से लगता था। उनकी आँखों में मद था, कचनार की आँखें ओले-सी सफेद और ठण्डी। उनकी मुसकान में ओठों पर चौदनी-सी खिल जाती है, कचनार की मुसकान में ओठ व्यंग्य-सा पैदा करते हैं। दुर्लैयाजू की एक गति, एक मराड़ न जाने कितनी गुदगुदी पैदा कर देता है। कचनार जब चलती है, ऐसा जान पड़ता है कि किमी मठ की योगिन है। बाल दोनों के बिलकुल काले और रेशम जैसे चिकने हैं, दोनों से कनक की किरणें फूटती है। दोनों के शरीर में सम्मोहन जादू भरा-सा है। दोनों बहुत सलोनी हैं। दुर्लैयाजू को देखते और बातें करते कभी जी नहीं अघाता। अन्यन्त सलोनी हैं। घूँघट उघाड़ते ही ऐसा लगता है, जैसे कमर बिखेर दी हो। कचनार को देखने पर ऐसा जान पड़ता है जैसे चौक पूर दिया हो।'

चरित्र चित्रण में प्रायः वर्मा जी अभिनयात्मक प्रणाली का अनुसरण करते हैं। अभिनयात्मक प्रणाली क्या है? वे हमारे समस्त पात्रों को कार्य करते, बोलते चालते, भगड़ते, आखेट-या युद्ध करते, संगीत या कला साधना में तन्मय खड़े कर देते हैं। इन पात्रों में निरन्तर गतिशीलता रहती है। इनके कथोपकथनों तथा क्रियाकलाप से हम सहज ही उनके चरित्रगत गुणों अथवा वृत्तियों का ज्ञान कर लेते हैं। इनमें अपनी ओर से जाड़ने के लिये कुछ नहीं रह जाता। जैसे नाटक में रंगभूमि पर पात्रों के क्रियाकलापों से हम कुछ निष्कर्षों पर पहुँचते हैं, उसी प्रकार इनके उपन्यासों के पात्रों के कार्यकलाप और वार्त्तालाप द्वारा चरित्र प्रकट होता है। उपन्यासकार सर्वथा तटस्थ रहता है। इस शैली का विकास वर्मा जी के नाटकों में विशेष रूप से देखा जा सकता है।

‘वर्मा जी के चरित्र चित्रण की दूसरी विधि मनोवैज्ञानिक विश्लेषण की है। उनकी मनोवैज्ञानिक अन्तर्दृष्टि सर्वत्र प्रकट होती है वे स्वयं पात्रों के चरित्रों को ताड़ फोड़ कर कैमिस्ट की तरह विश्लेषण कर हमारे सामने उपस्थिति कर देते हैं। किसी पात्र के चरित्र के विषय में स्वयं उनका क्या मत है, वे उसे कैसा अभिव्यक्ति करेंगे, किस गुण अथवा त्रुटि को पात्र के कार्यकलाप अथवा वार्त्तालाप द्वारा दिखायेंगे यह वे संक्षेप में स्वयं निर्देश कर देते हैं। चरित्र का यह विश्लेषण इतिहास सम्मत होता है। ‘कचनार’ के कुछ उदाहरण देखिए।

‘...गत और कलावती में कुछ वेतकल्लुफी बढ़ी, परन्तु दिलीप सिंह जिस मुक्त व्यवहार, अत्यन्त प्रेम, इठलाहट और अठसैलियों का आकांक्षी था, वह उसका नहीं मिल रहा था।’

‘...परन्तु उसका स्वभाव अधीर, उद्धत, कामुक और कपट प्रिय था।’

—मृगनयनी

स्वर, उसका स्वाभाविक मधुरता से भरा हुआ था और कान ग्रहणशील थे, बुद्धि प्रखर।’

—मृगनयनी

उनके पात्र दोनों वर्ग के हैं—स्थिर और गतिशील। उनका आकर्षण गतिशील चरित्र है, जो निरन्तर विकसित होते चलते हैं।

कथोपकथन:—

वर्मा जी ने जिस उपन्यास शैली को ग्रहण किया है, उसमें कथोपकथन का विशेष हाथ है। प्रायः घटना प्रधान उपन्यासों में उपन्यासकार लम्बे २ ऊबा देने वाले वर्णन करने लगते हैं। वर्मा जी अपने पात्रों की चरित्रिक विशेषताओं का व्यक्त करने वाले छोटे छोटे कथोपकथन का बड़ा कुशल उपयोग करते हैं। ‘भांसी की रानी’ के कथोपकथन छोटे छोटे और सजीव हैं। सर्वत्र स्वभाविकता एवं यथार्थवादिता का ध्यान रखा गया है।

‘वर्मा जी के पात्रों के कथोपकथन, चरित्रचित्रण में अत्यन्त सहायक हए हैं। जैसे व्यक्ति हैं, उसी प्रकार की बातचीत है। कथोपकथन

लम्बे नहीं है। कहीं कहीं विस्तृत होने पर भी, सरल स्पष्ट एवं सजीव हैं। उनमें पात्रों के अनुकूल स्वाभाविकता, उपयुक्तता और चुम्पती है। भाषा कथोपकथन का सारगर्भित करने के योग्य है। ग्रामीण ग्रामीणों, स्त्रियाँ स्त्रियों, अंग्रेज अंग्रेजों की तरह अपनी-२ भाषा में बात करते दिखई देते हैं। बातचीत में व्यर्थ तथा सारहीन अंश प्रायः नहीं के बराबर है; कहीं-० व्यंग्य का चमत्कार भी बहुत अच्छा है।^१

कथोपकथनों में वीर और शृङ्गार रस का परिपाक बहुत सुन्दर हुआ है। कभी व्यंग्य है, तो कहीं मीठी चुटकी ली गई है। मुहाविरों भी कुशलता से फिट किए गए हैं। वीर रस की बातचीत प्रायः अंज-पूर्ण है। कहीं दाशेनिकता का भी पुट है। सजीव स्वाभाविक और व्यंग्यपूर्ण कथोपकथन वर्मा जी के उपन्यासों का एक आकर्षण है।

वर्मा जी के कथोपकथन स्वभाविक एवं अभिनयात्मक प्रणाली के होते हैं। स्वभाविकता की रत्ना के हेतु वे पात्रों के गुण, कर्म स्वभाव और चरित्रों के अनुकूल भाषा एवं भाव का प्रयोग करते हैं। प्रत्येक पात्र के चरित्र के विषय में उसके कथन को सुनकर सहज ही उसका मानसिक चित्र खींचा जा सकता है।

जो पात्र जैसा है, वैसी ही भाषा-भाव का प्रयोग करता है। मुसलमान पात्रों के विचार एवं भाषा उर्दू है, वे काफी विलासी आर उत्तेजक स्वभाव के हैं। धर्म सम्बन्धी विवेचन और गूढ़ तात्त्विक आलोचना भी छोटे छोटे कथोपकथनों में नित्य प्रति की बातचीत की शैली में अभिव्यक्त की गई है। व्याख्यान का रूप कहीं भी नहीं लिया गया है।

कथोपकथनों द्वारा वर्मा जी नाटकीय परिस्थिति एवं अभिनयात्मक तत्त्वों का प्रादुर्भाव करते हैं। सरल, स्वभाविक चलती भाषा

में ऐसे छोटे छोटे वाक्यों से बातें कगाई गई हैं कि दृश्य जैसे सजीव हो गये है। कहा कहीं हास्य व्यंग्य का कलात्मक प्रयोग भी किया गया है। कथोपकथन छोटे छोटे, सरल, और मर्मस्पर्शी है। इनमें नाटकीय तत्त्व देखने योग्य हैं। एक दूसरे की परस्पर बातचीत से ही कथासूत्र बढ़ता है, परिस्थिति का चित्रण होता है, तथा पात्र के गुण कर्म स्वभाव निखर कर उपर आते हैं। एक कथोपकथन लीजिये—

‘महागजा का एक दरिद्र परन्तु निर्लोभ ब्राह्मण से बान कर रहे हैं। धर्म बेचा नहीं जा सकता।’

‘क्या तुम यह नहीं सोचते कि कितने हिन्दू तुम लोगों के इस कट्टरपन के कारण धर्म और समाज से दूर जा पड़े है?’

‘शरीर में फोड़ा या कोढ़ होने से वह अंग काम का नहीं रहता।’

‘तुमको कभी फोड़ा हुआ या कोढ़?’

‘कभी नहीं।’

‘होगा तो क्या करोगे?’

‘अंग को काट कर फेंक दूंगा।’

‘विवेक से काम लो शास्त्री।’

‘महागज से मैं क्या निवेदन करूँ? इतना तो भी कहना पड़ेगा कि क्षत्रिय ब्राह्मण को उपदेश देने के लिये नहीं बनाये गये है, धर्म और गौ, ब्राह्मण की रक्षा के लिये बनाये गये है।’

‘... मैं इस विवाह को अनुचित समझता हूँ। इसमें परस्पर कलह फैलेगी मैं आर्यावर्त को अपने पुरखों की भाँति प्रबल बनाना चाहता हूँ।’

वर्मा जी के ये कथोपकथन सीदी सादी भाषा में पात्रों का परिचय देते हुए कथासूत्र को आगे ढकेलते हैं। कल्पना द्वारा हम मानस पटल पर पात्रों का चित्र अङ्कित कर लेते हैं।

वातावरणः—

वातावरण की मृष्टि में वर्माजी ने विशेष ध्यान दिया है। वातावरण का सम्बन्ध रस से है। मानव के राग द्वेष, प्रेम करुणा, हर्ष, विषाद, क्रोध, घृणा, ईर्ष्या आदि मनाधिकारों के चित्रण के द्वारा स्थान-स्थान पर वर्माजी ने भावात्मक चित्र प्रस्तुत किये हैं। अपने पात्रों के चरित्रों के अनुकूल वातावरण निर्माण का विशेष ध्यान रखा है।

ऐतिहासिक पात्र होने के कारण देश काल और तत्कालीन समाज का विशेष रूप से ध्यान रखा है। देश के चित्रण के अन्तर्गत अन्य स्थान, भौगोलिक स्थिति, गढ़, किले, नगर के समीप की नदियाँ, वृक्ष, वुर्जों, फाटकों का सुचारू वर्णन किया है। बुन्देलखण्ड, झाँसी, नरवर, ग्वालियर इत्यादि के भू भागों के वर्णन बहुत विस्तृत रहे हैं। धर्म प्राण देश होने के कारण वर्माजी ने अतीत भारत के यज्ञ, आढ़, पूजा-पाठ, रुढ़ियाँ तथा धार्मिक अनुष्ठानों उत्सवों का सफल वर्णन किया है। उनके उपन्यासों में प्राकृतिक दृश्यों के वर्णन प्रचुरता से मिलते हैं। प्राचीन सामन्तीय-जीवन, युद्ध, आखेट, प्रेम सौन्दर्य और वासना-लोलुपता ने भिन्न-भिन्न वातावरण उत्पन्न करने का विशेष ध्यान दिया है। आपके अभिनय संगीत, कला, नृत्य, आखेट, युद्ध आदि घटनाओं के सजीव चित्रों के वातावरण बड़े सफल रहे हैं।

वर्माजी ने प्रकृति के अञ्चल में अपने कुछ पात्रों को खड़ा करके वास्तविक ग्रामीण वातावरण उपस्थित किया है। आगे जिस घटना को खाना है, उसके लिए वे पहले से ही प्रकृति के सुखद या विषाद-पूर्ण वर्णन द्वारा पूर्ण भूमिका तैयार करते हैं। उससे स्वाभाविकता उत्पन्न होती है। उपयुक्त वातावरण में सँजोकर उन्होंने अपने पात्रों की प्राण प्रतिष्ठा की है।

शैली:—

वर्माजी की उपन्यास शैली वर्णात्मक घटना प्रधान हैं। एक के पश्चात् दूसरी, तीसरी-अनेक घटनाएँ निरन्तर चलती रहती हैं और पाठक का मन उलझाये रहती है। वर्णात्मक शैली में स्वयं बहुत-सी बातें कहने (Comment) की भी सुविधा रहती है। इन वर्णनों में आखेट, युद्ध, प्राकृतिक दृश्य, प्रेम-प्रसंग तथा सामन्तों की कला साधना के वर्णन चित्रोपम हैं। गढ़, किलों, नहर, महल, मन्दिरों आदि के वर्णनों में ऐसा प्रतीत होता है, वहाँ जाकर एक एक वस्तु देखकर सावधानी से लिखे गए हैं।

वर्णात्मक शैली में कथोपकथन का मणि कांचन सहयोग मिलने से स्वाभाविकता आगई है और पात्रों की चरित्रगत विशिष्टताओं को भी खिलने का अच्छा अवसर मिला है। कहीं-कहीं वर्माजी इतिहास के शुष्क लोक में विचरण करने लगते हैं, जिससे पाठक उकता जाता है। पर ऐसे स्थल पर अधिक नहीं हैं। शीघ्र ही उसे प्रेम, वीरता साहस के भावुकता पूर्ण सरस स्थल या स्वाभाविक कथोपकथन प्राप्त हो जाते हैं।

आन्तरिक उथल पुथल और मनः संघर्ष की अभिव्यक्ति में कलाकार के व्यक्तित्व की अमिट छाप मिलती है इसी में ये आदर्श की ओर संकेत भी कर देते हैं।

नाटकीय वातावरण उपस्थित कर देने की अद्भुत सामर्थ्य वर्माजी की लेखनी है। पात्रों की बातचीत इतनी सजीव तथा स्वाभाविक होती है कि सम्पूर्ण चित्र रंगमंच पर अभिनय होने वाले नाटक की तरह हमारे मनः नेत्रों के सम्मुख आ जाता है।

वर्माजी ने कई प्रकार की शैली का प्रयोग किया है जैसे--कथोपकथन, प्रभाव, भावुकतापूर्ण वर्णात्मक, एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, व्यापकात्मक, दार्शनिक गुत्थियों से परिपूर्ण, हास्य व्यंग्यमय। सब से सफल अभिनयात्मक या नाटकीय शैली में रहे हैं।

बर्मा जी की शैली के सम्बन्ध में श्री र जेन्द्रसिंह गौड़ एम० ए० की सम्मति मान्य है। आप लिखते हैं—‘बर्मा जी की शैली दो प्रकार की है—(१) वर्णनात्मक (इसके अन्तर्गत स्थानों, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, वातावरण तथा कथावस्तु का निर्वाह आ जाता है) (२) भावान्मक (पात्रों का मानसिक अन्तर्द्वन्द और हृदयाति इच्छाएं इत्यादि) । उनकी इन दोनों प्रकार की शैलियों में शब्द चयन शिष्ट और सयत है। वाक्य छोटे और अर्थ पूर्ण, पर कहीं कहीं वे शिथिल हो गये हैं। उनके वाक्य विन्यास में प्रौढ़ता नहीं है।

अपनी वर्णनात्मक शैली में उन्होंने अपनी स्वतन्त्रता से भी काम लिया है। इस प्रकार उसमें सब कुछ हैं पर तंग नहीं है। उनकी भावात्मक शैली अवश्य प्रवाह पूर्ण और आकर्षक है, पर उपमाओं के प्रयोग के कारण कहीं कहीं उसमें बाधा भी पड़ी है।

उनका प्राकृतिक चित्रण बहुत ही अनूठा और प्रभावोत्पादक है। अपने वातावरण का चित्रण भी वे बड़े कौशल से करते हैं और उनका शैलिष्ट चित्र उपस्थित करते हैं।

इसी प्रकार उनका मानवीय आकृतियों और व्यापारों का चित्रण भी प्रभावोत्पादकता से परिपूर्ण है।’

‘युद्ध के वर्णनों की शैली में एक अद्भुत चमत्कार आ गया है। ये वर्णन पढ़कर ऐसा अनुमान होने लगता है मानो प्रत्येक काये में गति है। जिस प्रकार चित्रकला में गति चित्र होते हैं, उसी प्रकार साहित्य में भी बर्मा जी ने गति चित्र उपस्थित करने का प्रयत्न किया है। प्रायः दो चित्र एक साथ चलते हैं, जो एक दूसरे की गति में सहायक होते हैं।’*

जहां जहां भावुक स्थलों का प्रतिपादन आया है, बर्मा जी की शैली सरस हो उठी है। वह हृदय को स्पर्श करती है। इनकी सरसता से हम आत्म विभोर हो उठते हैं।

भाषा:—

वर्मा जी की भाषा सरल, सरस, और प्रवाहमयी है। भाषा पर उन्हें असाधारण अधिकार है। बिना किसी मानसिक श्रम के भाषों तथा नाना घटनाओं से उत्पन्न परिस्थितियों के वर्णन पढ़ते हुये पाठक उनके उपन्यास—संसार में बहा चला जाता है। यहाँ साहित्यिक जटिलता, दुरुहता या अधिक अलंकारों से उत्पन्न कठिनता नहीं है, हृदय वीणा की मधुर झंकार है।

एक आलोचक के शब्दों में, 'वर्मा जी की भाषा कथावस्तु के अनुकूल बहुत स्वभाविक और प्रवाहमयी है। लांच चाहे उतना नहीं पर दिलचस्पी उपन्यास पढ़ने में बनी रहती है। ग्रामीण और स्थानीय शब्दों के प्रयोग में वर्मा जी हिचकिचाते नहीं' 'भाषा को समृद्ध बनाने का उनका प्रयास वांछनीय है, पर कहीं-कहीं भाषा बिल्कुल हिन्दुस्तानी हो जाती है, जिसे आजकल साहित्यिक नहीं चाहते। जैसे—'राजा ने इस तर्क पर ज़रा ज़ोर किया'; भारतीय संस्कृति हेच और नाचीज़ है।' आपकी उपमाएँ उपन्यास में चमत्कार कर देती हैं।

'भूगनयनी' में आपने नई तरह की उपमाओं का प्रयोग यत्र तत्र किया है, जो हास्य उत्पन्न करती हैं जैसे—

बघर्रा ने खाना शुरू किया.....

'क्या है यह ?' बघर्रा ने पूछा जैसे कोई पेड़ टूट कर गिरा हो।

'लाओ इधर' बघर्रा ने पाव भर कर एक घास मुँह में डालते हुए मिठास के साथ कहा—जैसी पेड़ की डाल टूट पड़ी हो।

.....

'बहुत खूब ! बघर्रा के मुँह से निकला, जैसे किसी पहाड़ पर से चट्टान टूट कर लुढ़का हो।

.....

पिल्ली के कानों को ऐसा प्रतीत हुआ जैसे किसी बड़े हौज में मैसा कूदा हो।

बारीक स्वर में बोली, 'सरकार, मांडू के पास के एक जंगल के रहने वाले हैं, हमलोग ।'

'कहाँ जा रहे हो तुम ?' जैसे कोई चट्टान फटी हो, 'सरकार मेवाड़ की तरफ ।'

'क्यों ?' जैसे लोहे के दो गोले आपस में टकरा गये हों

.....

लाखी के रखे हाँठों पर मुसकान आई जैसे गरमियों के सूखे नाले में पहली छिछली वर्षा की पतली धार आई हों ।'

.....

वर्मा जी के वर्णन शुष्क इतिहासकार के वर्णन न होकर कवि हृदय से निम्नत कल्पना और भावुकता के स्पर्श से रंगीन भावपूर्ण वर्णन हैं। नसीरुद्दीन के जल विहार की सूक्ष्मता एवं नाटकीयता देखिए -

"जल विहार के विस्तृत क्षेत्र में कनारों की आड़े लगा दी गई एक और लहराने वाली भील की नीली जलराशि, दूसरी ओर कनारों के भीतर रंग विरंगे बारीक बन्धों और झिलमिलाते अलंकारों से सजी हुई वे आपसगये। टिड्डीदल की तरह उमड़ रही थीं, अन्तर उनमें और टिड्डियों में इतना ही था कि टिड्डियाँ एक ही रंग की होती हैं। बरसात की तितलियाँ जैसी, परन्तु बरसात में एक ही स्थान पर इतनी तितलियाँ इकट्ठी नहीं दिखलाई पड़ती। सब हंसती मुस्कराती बातें कर रही थीं। सब अपने बन्धों को लहरा फहरा रही थीं, सब अपने यौवन का प्रदर्शन कर रही थीं.....।"

भाषा पर पूर्ण अधिकार होने के कारण वर्मा जी हर प्रकार की भावव्यञ्जना के लिए शब्द चयन कर लेते हैं—सरस साहित्यिक, ग्रामीण, उर्दू मिश्रित हिन्दुस्तानी, तथा चलती हिन्दी। अपना भाव शुद्ध रूप में अभिव्यक्त करने की ओर उनकी प्रवृत्ति है। जहाँ वे जैसी आवश्यकता समझते हैं, वैसी ही शब्दावली का प्रयोग करते हैं।

हैं। उनके शब्द भण्डार में ठेठ साहित्यिक हिन्दी, संस्कृत, उर्दू-फारसी और चलती हिन्दी का वृहत् भण्डार है। बुन्देलखण्डी स्थानीय शब्दों का भी प्रयोग किया है। साधारण पाठक से लेकर उच्चकोटि के विद्वान उसमें रस खाँच सकते हैं।

हिन्दी के विद्वानों का उर्दू के प्रति विरोध ही रहा है किन्तु वर्मा जी के कुछ पात्र मुसलिम राजा, नवाब, अधिपति, शासक हैं। मुसलिम वातावरण तथा वात्तालाप प्रस्तुत करने के लिये वर्मा जी ने उर्दू फारसी के शब्दों का प्रयोग किया है। स्वभाविकता की रक्षा एवं यथार्थवाद की प्रतिष्ठा की दृष्टि से यह उचित प्रतीत होता है। उनकी दृष्टि हिन्दी के शब्द भण्डार में प्रचलित उर्दू के शब्दों को नीर नीर की तरह मिश्रित कर देना है। मुसलिम पात्र वही उर्दू मिश्रित हिन्दुस्तानी बोलते हैं, जो साधारण रूप से प्रत्येक व्यक्ति समझ सकता है।

जहाँ उर्दू-फारसी का प्रयोग है, वहाँ तत्सम संस्कृत शब्दों का भी ऐसा प्रयोग किया है, जो सहज ही बोध गम्य है। जो पात्र सुशिक्षित हैं, वे संस्कृत शब्दों का प्रयोग करते हैं। भिन्न भिन्न सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्तरों के अनुकूल वे भाषा में उचित परिवर्तन करते रहते हैं। ❀ ग्रामीण तथा निम्न वर्ग के अशिक्षित व्यक्ति साधारण, चलती हुई प्रचलित भाषा का प्रयोग करते हैं, जिसमें-स्थानीय (Local) शब्दों का भी प्रयोग है।

श्री रामखेलावन चौधरी एवं श्री लक्ष्मीनारायण टण्डन के विचार देखिए—‘वर्मा जी हर एक बात नपी-तुली भाषा में लिखते हैं, व्यर्थ की तूल नहीं बढ़ाते। उनकी भाषा में एक प्रकार की रुक्षता है, प्रसार की तरह सरस नहीं। संस्कृत के तत्सम और तद्भूत शब्दों का प्रयोग

❀ श्री वृन्दावनलाल वर्मा की भाषा का आदर्श बहुत कुछ उनके पात्रों के सांस्कृतिक एवं सामाजिक स्तर के आधार पर बना है।”

—श्री हरस्वरूप माथुर

स्थानीय शब्दों के प्रयोग के साथ हुआ है, भाषा व्यवहारिक है, शुद्ध साहित्यिक नहीं। प्रेमचन्द की अपेक्षा उनकी शैली का स्थिर रूप है।

उपर्युक्त मत से सहमत नहीं हुआ जा सकेगा। उन पर रूढ़ता का जो अभियोग लगाया है, वह उचित नहीं है। कारण, वे जैसी परिस्थिति और जैसा पात्र होता है, उसके अनुकूल ही भाषा और शैली का प्रयोग चलता है। मुमलमान पात्र और वातावरण आने पर वे ऐतिहासिक सत्यों का उद्घाटन करने लगते हैं। ऐतिहासिक सत्यों के निर्देशन में कल्पना और भावुकता से काम नहीं लिया जा सकता। वस्तुतः भाषा के सरलता एवं बोधगम्यता बनी रहती है। भावुक तथा प्रेम सम्बन्धी स्थलों में सरसता के स्पर्श है।

उनकी भाषा का अंतिम गुण मितव्ययता है। वे व्यर्थ के शब्दा-डम्बर से दूर रहते हैं और कम से कम शब्द लेकर अधिक से व्यक्त करने के आदी हैं। जिन दृश्यों या प्रसंगों में उनका जी नहीं रमा है उन्हें उन्होंने दो चार पंक्तियों में ही समाप्त कर दिया है। इसके विपरीत प्राकृतिक दृश्यो एवं शिकार के वर्णनों में कमाल दिखाया है। इनमें भाषा का सौन्दर्य एवं सूक्ष्म दर्शन दर्शनीय है। आपके वाक्य छोटे-छोटे होते हैं। चित्रकार की तूलिका जैसे स्पर्शों (Touches) से वे अपने चित्र खींचते जाते हैं।

धर्मा जी के उपन्यासों की वृत्तियाँ

१—वर्तमान जीवन चित्रों का अभाव :—

जहाँ प्रेमचन्द, जैनेन्द्र, निराला आदि ने वर्तमान जीवन तथा समस्याओं को चित्रित कर सामाजिक जीवन की बहुमुखी आलोचना की है, धर्मा जी के उपन्यासों में वर्तमान जीवन के चित्रों का

अभाव मिलता है। उनके उपन्यासों का वातावरण हमें बीते युग में ले जाता है और हम राजपूती शक्ति की बुझती हुई लौ के चित्र देखते हैं। उनकी सहानुभूति ने प्राचीन भग्नावशेषों का चक्कर काटा है। यदि उनके उपन्यासों में वर्तमान समय के चरित्र आये भी हैं, तो वे प्राचीन वैभव की छाया मात्र हैं।^१

२—आन्तरिक जीवन के विश्लेषण की कमी :—

श्री वृन्दावनलाल वर्मा केवल अच्छे कथा लेखक हैं। कथा कहने और उसे सुरुचिपूर्ण ढङ्ग से रोचक बनाने में वे सिद्धहस्त हैं। मानव-जीवन के विभिन्न पहलुओं, समाज की अनेक गुत्थियों तथा प्रेम के अतिरिक्त अन्य अनुभूतियों की उन्होंने विवेचना का विषय बहुत कम बनाया है। वे जीवन की विवेचना नहीं करते; जीवन-संघर्षों की छाप नहीं दिखाई देती। जैनेन्द्र ने उनकी अपेक्षा मानव मन की निगूढ़तम गुत्थियों को सुलझाने का अपेक्षाकृत सफल प्रयत्न किया है।

३—ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से उत्पन्न शुष्कता :—

वर्मा जी ने ऐतिहासिक वातावरण चित्रण में बहुत खोजबीन की है। अपना समस्त ऐतिहासिक ज्ञान उपन्यास के कलेवर में उड़ेल देने का प्रयत्न किया है। इसलिये आपके कुछ उपन्यासों का ऐतिहासिक मूल्य होते हुए भी औपन्यासिक मूल्य कम हो गया है। कहीं कहीं वे स्थानीय राजनीति के साथ-साथ तत्कालीन भारतीय सामाजिक और राजनैतिक दशा का ज्ञान भली भाँति करने में अति कर गए हैं।

४—अनावश्यक विस्तार :—

इतिहास एक विशाल समुद्र है। अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में वर्मा जी ने अनावश्यक विस्तार कर दिया है। सामाजिक और राजनैतिक परिस्थितियों का स्पष्ट करने, प्राकृतिक दृश्यों के विस्तार रूढ़िगण्डन, धार्मिक वादविवादों में उपन्यासों का आकार बहुत बढ़ गया है। 'भांसी की रानी' में कितने ही स्थानों को कोनेन की गोली की तरह निगल कर पढ़ना पड़ता है और कथासूत्र टूटने सा लगता है। 'मृगनयनी' में संगीत कला, रूढ़िगत और उदार धर्म, शैव और वैष्णव भेद भाव के चित्रण में पाठक को कोई रुचि नहीं प्रतीत होती।

५—कथा विकास में त्रुटियाँ :—

बड़ा कथानक तथा जीवन का विशद चित्र अंकित करने के लोभ में वर्मा जी घटनाओं का वर्णन तेजी से करते चलते हैं। कहीं कहीं बिना पूर्व संकेत या परिस्थिति के यकायक कोई घटना हमारे सामने आ जाती है, जबकि पाठक इसके लिये तैयार नहीं होता, न कोई विशेष कारण ही होता है। उदाहरण स्वरूप लाखी की माँ की आकस्मिक मृत्यु, मृगनयनी और मानसिंह का एक दृष्टि में प्रेम, फिर तुरन्त विवाह, आखेट तथा तत्सम्बन्धी हिस्सों में जल्दबाजी से काम लिया गया है। १

द्वितीय खण्ड

मृगनयनी : समीक्षात्मक अध्ययन

मृगनयनी : कथासार

१५ वीं शताब्दी के अन्त में, जब भारत में कोई उत्तरदायी शासन न था। ग्वालियर के पश्चिम-दक्षिण में लगभग ६ कोस दूरी पर राई नामक एक ग्राम था। इसी राई में उपन्यास की नायिका मृगनयनी (निन्नी) का निवास था। राजनैतिक उथल-पुथल के कारण ग्वालियर के समीप के स्थानों का जीवन आतंकों से परिपूर्ण था। ग्वालियर पर सिकन्दर लोदी के पिता बहलोल लोदी ने आक्रमण किए, फिर सिकन्दर ने उसे पद-दालत करने में कुछ नहीं छोड़ा, सिकन्दर ग्वालियर पर पाँच बार आया और पाँचों बार चतुर शासक, योद्धा और कलाकार राजा मानसिंह तोमर के द्वारा पीछे हटाया गया। इस पृष्ठभूमि पर उपन्यास का कथानक चलता है।

राई में निन्नी, उसका भाई अटल तथा लाखी अपनी माँ के साथ रहती है। निन्नी और अटल खेती, तथा लाखी और उसकी माँ गाय का दूध बेचकर तथा मजदूरी से निर्वाह करते हैं निन्नी और लाखी परस्पर सहेलियाँ हैं, जो आखेट और लक्ष्यबोध में निपुण हैं।

ये दोनों समवयस्क हैं—आयु लगभग १५-१६ वर्ष, परन्तु निन्नी वलिष्ट और पुष्ट काया की, लाखी दुबली और छरेंगी। निन्नी सौन्दर्य में अनुपम है। राई में गरीबी से जीवन निर्वाह करते हैं। धीरे-धीरे अटल लाखी की ओर आकृष्ट होता है और यह बाद में प्रेम के रूप में परिणत हो जाता है। दुर्भाग्य से इनके विवाह में जाति-पाति का भेद आ जाता है—अटल गूजर और लाखी अहीर है। मन्त्र प्रेमी रूढ़िवादी ब्राह्मण पुजारी बोधन में अनुनय विनय करते हैं किन्तु वह विवाह कराने का राजी नहीं होता। इसी बीच में लू लगने से लाखी की माता का देहान्त हो जाता है और बेचारी लाखी को निन्नी और अटल के साथ रहने पर विवश होना पड़ता है। समाज इनको निरम्कृत करता है और जाति बिरादरी वाले चैन नहीं लेने देते।

मृगनयनी के रूप की चर्चा ग्वालियर के राजा मानसिंह तोमर तक पहुँचती है। मांडू के शामक गयासुद्दीन को भी इसका पता अपने मुँह लगे नौकर ख्वाजा मटरू द्वारा लगता है। वह दोनों नटों के एक दल को प्रलाभन देकर दोनों कन्याओं को बगवश ले आने की योजना बनाते हैं। नट आकर राई के समीप अपना पड़ाव डालकर वस्त्र आभूषण एवं भोजन द्वारा दोनों लड़कियों को फुसलाते हैं, पर वे स्वाभिमानी, निडर प्रकृति की हैं। नट अपनी सहायता के निमित्त मांडू से चार सैनिक बुलाते हैं। संयोग से ये चारों रात्रि की चांदनी में छिपकर उनसे दो को मार भगाती हैं, शेष भाग जाते हैं। भावी आक्रमण की आशंका से सम्पूर्ण ग्राम त्रस्त हो जाता है। बचाव के लिए प्रार्थना का संदेश लेकर उस ग्राम का पुजारी बोधन राजा मानसिंह के पास जाता है।

अश्वारोहियों की मृत्यु एवं निन्नी को न पाने के कारण क्रुद्ध होकर गयासुद्दीन ग्वालियर और राई पर आक्रमण की योजना बनाता है। राजा मानसिंह बोधन पुजारी से मृगनयनी के रूप की चर्चा सुनकर आखेट के बहाने राई आता है, लक्ष्यबोध में दोनों लड़कियों का

भारी सफलता प्राप्त होती है। निन्नी पर राजा आशक्त होते हैं। उससे विवाह कर ग्वालियर ले आते हैं। अब अटल और लाखी ही बच रहते हैं : ये पुजारी से विवाह के लिये आग्रह करते हैं ! वह समाज रुढ़ियों में बँधा हुआ है, वर्णाश्रम धर्म का कट्टर अनुयायी है। अतः स्वयं अटल और लाखी विवाह कर लेते हैं। रुढ़िवादी समाज कं चैन कहाँ ? पंचायत इनका बहिष्कार करती है। समाज तथा जाति के अन्याचारों से डर कर अटल मटरू-प्रेरित नटों के साथ मगगोनी चला जाता है। एक नटिनी पिल्ली अपनी भाव भंगिमा और अंग संचालन द्वारा अटल को अपने वश में करने का उद्योग करती है गयासुद्दीन नरवर पर आक्रमण कर देता है। आश्रय के लिये सब किले में भागते हैं। वह फिर भी अटल और लाखी के पीछे लगे रहते हैं। पोटा और पिल्ली के अतिरिक्त अन्य नट किले में आ जाते हैं। ये दोनों माझ यह समाचार देने चल देते हैं।

निन्नी ग्वालियर में रानी मृगनयनी के नाम से प्रसिद्ध होती है राजा मानसिंह के पहिले ही में रानियाँ हैं, किन्तु वह नई रानी का बुद्धि, वीरता, लक्ष्यबोध, और कला-सौन्दर्य में निपुण पाता है। कुशाग्रबुद्धि होने के कारण मृगनयनी शीघ्र ही संगीत में भी निपुण होने लगती है। इस शान्ति जीवन में यहायक एक तूफान आता है जब राजा मानसिंह के पास नरवर पर आक्रमण की सूचना पहुँचती है। मृगनयनी के हृदय में भाई के लिए प्रेम उमड़ता है ; लाखी और अटल को राईसे लाने के लिये प्रबन्ध किया जाता है, किन्तु वहाँ जाकर विदित होता है कि वे पहले से ही लुप्त हो चुके हैं। मानसिंह नरवर की रक्षा के लिये पहुँचता है। उधर पोटा और पिल्ली लाखी के समाचार पहुँचा कर किले में लौट आते हैं। एक रात रस्सा बांध कर उसके सहारे नट लाखी को लेकर भाग निकलना चाहते हैं कि लाखी कँगूरे से बँधी हुई रस्सी को काट डालती है और पिल्ली को उसकी कुटिलता की सजा मिलती है।

गयासुहीन ने आक्रमण किया पर राजा मानसिंह के समय पर आ जाने से किला बच गया। यहाँ लाखी और अटल मिल जाने से राजा को अतीव प्रसन्नता हुई और वे स्नेह और सम्मान के साथ ग्वालियर ले जाये गये। मृगनयनी ने इन दोनों के निवास का समुचित प्रबन्ध कर दिया। अटल और लाखी का शास्त्र सम्मत विवाह करा दिया गया। विवाह के पश्चात् जब सप्तभोज हो रहा था, बड़ी रानी ने मृगनयनी को विप देने का पड़्यन्त्र किया किन्तु परमेश्वर की कृपा से प्राण बच गए। अटल-लाखी को राई की गद्दी दे दी गई। वे यहाँ शान्ति से रहने लगे। उधर सिकन्दर लांदी ईश्या मन में लिये बैठा ही हुआ था। उसने दुवारा ग्वालियर पर आक्रमण की योजना बनाई। पहले राई की गद्दी पर आक्रमण हुआ। एक रात जब गद्दी पर लाखी रात को फिर रही थी, उसने एक स्थान पर आक्रमणकारी सैनिकों को चढ़ते देखा, थोड़ा-सा युद्ध हुआ, लाखी का स्वर्गवास हो गया। उधर मानसिंह ने किले से निकल कर आक्रमण किया और सिकन्दर को पीछे हटा दिया। उसे यह मालूम करके बड़ा दुःख हुआ कि लाखी और अटल का देहान्त हो गया है।

सिकन्दर ने दुवारा सहायक सेना की मदद से नरवर और ग्वालियर पर आक्रमण किया। इस बार मानसिंह को भी किले से ही लड़ना पड़ा; नरवर का पराभव हुआ; अनेक मूर्तियाँ एवं मंदिर नष्ट कर सिकन्दर दिल्ली लौट गया। ग्वालियर पर वह उस समय आक्रमण न कर सका। वह चाहता था कि नई सेना के द्वारा पुनः हमला किया जाय। इसी की तैयारी में उसकी मृत्यु हो गई।

राजा मानसिंह तोमर ग्वालियर में ललित कलाओं के विकास में सलग्न रहे, सेना का संगठन करते रहे। मृगनयनी के दो पुत्र हुए किन्तु उत्तराधिकार की समस्या बड़ी रानी सुमनमोहनी के पुत्र को देकर हल हो गई। मृगनयनी ने अपना स्वार्थ न देख कर्त्तव्य पथ का अनुसरण किया। वह ललित कलाओं के प्रोत्साहन के अतिरिक्त प्रजा के सुख-समृद्धि का सदैव ध्यान रखती रहीं।

कथानक की विशेषताएँ

१—मूल कथानक : ऐतिहासिक सत्यता की रक्षा

‘मृगनयनी’ का मूल कथानक (राजा मानसिंह बीसवीं तथा गूजरी रानी मृगनयनी की प्रणय कहानी) ऐतिहासिक आधारों पर खड़ा किया गया है। मानसिंह तामर १४८६ से १४९६ तक ग्वालियर का अधिपति रहा। इतिहासकारों ने राजा मानसिंह को वीर और योग्य शासक बतलाया है। अंग्रेज इतिहासकारों ने तो मानसिंह के शासन काल को तामर शासन का स्वर्णयुग कहा है। १५ वीं शताब्दी के अन्त और १६ वीं शताब्दी के प्रारम्भ का प्रारम्भ राजनैतिक और आर्थिक दृष्टि से भारतीय इतिहास में अस्थिरता का युग था; अनेक प्रकार की कठिनाइयाँ माग में थी; सिकन्दर ने ५ बार ग्वालियर पर आक्रमण किया था पर तमाम संकटों के होते हुये भी राजा मानसिंह ने उसे पीछे हटा दिया था। ऐसा अनुमान है कि गूजरी रानी मृगनयनी तथा राजा मानसिंह का विवाह १४६२ के लगभग हुआ होगा ग्वालियर के किले में गूजरी महल और मान मन्दिर इसके प्रमाण हैं।

बर्मा जी ने ऐतिहासिक पृष्ठ-भूमि का चित्रण करते हुये इस उपन्यास में मृगनयनी तथा राजा मानसिंह के चरित्रों को उभारा है। प्रारम्भ से अन्त तक इसी प्रायः कथा के चित्रण में सलग्न रहे हैं। किंवदन्तियों का भी सहारा लिया गया है, किन्तु उन पर भी पर्याप्त खोजबीन की गई है।

मूल कथानक को हम दो भागों में विभक्त कर सकते हैं—(१) राई के ग्राम में दरिद्र किसान की सुन्दरी कन्या निन्नी के रूप में मृगनयनी का चित्रण। इस भाग में निन्नी का सरल आढम्बर-विहीन प्रामोक्ष्य जीवन, बाण संधान, लक्ष्यवेध की निपुणता, साहस और पराक्रम चित्रित है। जीवन के प्रभात में बनवासिनी शकुन्तला की तरह

यह स्वच्छन्द, मशक, निर्भीक वीरवाला है। अरने भैंसें, जंगली पुअरों और नाहरो के शिकार में उसे विशेष रुचि है। इस भाग में निन्नी की शिकार प्रियता के साथ नटों के पड़यन्त्र से रक्षा, दो मैनिकों का बध, लक्ष्यबध परीक्षा तथा उसका मानसिंह के साथ विवाह का विस्तार से वर्णन किया गया है। घटनाएँ प्रायः निन्नी के चरित्र को उभारती हैं। निन्नी और लाग्गी का जङ्गलों में निर्मय घूमना, खेतों की रक्षा, आखेट, नट शिवियों में आना जाना, गांव-वालों के अत्याचार, जाति-पांति की कठोरता, उसकी फैलती हुई सौन्दर्य कीर्ति कथा में रोचकता, सरसता और शौतूहल बनाए रखती है।

विवाह के पश्चात् उपन्यास का दूसरा भाग प्रारम्भ होता है। कथानक का यह भाग मृगनयनी में अपेक्षा मानसिंह तथा तात्कालिक राजनैतिक पृष्ठ भूमि से अधिक सम्बन्धित है। इसमें मृगनयनी वह महत्त्व प्राप्त नहीं करती, जो उसे प्रथम भाग में प्राप्त हुआ है। इसमें रानी मृगनयनी का वैवाहिक जीवन, राजमहलों में हाने वाले पड़यन्त्र, सुख-विलास, रानियों की पारस्परिक ईर्ष्या, द्वेष, सन्देह, मृगनयनी की कला प्रियता, कर्तव्यशीलता, मद्दयता, गौरव और अपूर्व त्याग से सम्बन्धित घटनाओं का चित्रण है। इसमें मानसिंह का चरित्र उभारकर चारों ओर फैला हुआ दीखता है, किन्तु जहां २ मृगनयनी को प्रवेश कराया गया है, वहाँ वहाँ उपन्यासकार का हृदय उसमें रमा है। कला-साधना और संगीत के अभ्यास के वर्णन अत्यन्त सजीव हैं। मानसिंह-मृगनयनी के रोमांटिक सम्मिलन सफल और आकर्षक है।

मूल कथावस्तु में प्रायः कोई परिवर्तन संभव नहीं होता, क्योंकि मुख्य पात्र-पात्री इतिहास विख्यात स्त्री-पुरुष होते हैं। वर्मा जी ने ऐतिहासिक अनुसंधानों पर मानसिंह और मृगनयनी के कार्य, चरित्र और रुचि का चित्रण किया है। सर्वत्र उन्हें ऐतिहासिक सत्यता, आदर्शों की रक्षा एवं अन्तिम प्रभाव की एकता का ध्यान

रहा है। मानसिंह के आठ रानियों का होना, मृगनयनी का अपने पुत्रों को राज्य का उत्तराधिकारी न बना, बड़ी रानी के पुत्र विक्रमादित्य को उत्तराधिकारी बनाना, राई ग्राम से ग्वालियर के किले तक सांक नदी की नहर बनवाना, नटनी का रस्मे के महारे किले से बाहर होना, लाखी-अटल की गढ़ी खड़हर—ऐतिहासिक घटनाएँ हैं, जिनके प्रमाण हैं। लेखक ने स्वयं लिखा है।

“उपन्यास में आये हुये सभी चरित्र-थोड़ों को छाँड़कर ऐतिहासिक हैं। विजय जंगम लिङ्गायत था। ग्वालियर के किले के भीतर जैसे तैल मन्दिर बना, उसी प्रकार कर्नाटक से विजय प्रादुर्भूत हुआ विजयजंगम लिङ्गायत मानसिंह तोमर का मित्र था। ‘मृगनयनी’ ने अपने विवाह से पूर्व राजा मानसिंह से जो वचन लिए थे, उनमें से एक यह भी कि राजा राई गाँव से ग्वालियर किले तक सांक नदी की नहर ले जायेंगे। राजा ने यह नहर बनवाई। उसके चिह्न अब भी वर्तमान हैं।”

गौण एवं प्रासंगिक कथाएँ

मूल कथानक वृत्त के तन के समान है, तो उससे जुड़ी हुई अन्य छोटी छोटी कथाएँ टहनियों की तरह हैं। प्रासंगिक कथाओं के द्वारा उपन्यासकार मुख्य चरित्रों पर अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव डालता है और कथा की रोचकता और उत्सुकता की अभिवृद्धि करता है। कुछ प्रासंगिक कथाएँ अपने छोटे से आकार में ही पूर्ण होती हैं, और उनका थोड़ा सा हिस्सा मूल कथानक से संयुक्त रहता है।

‘मृगनयनी’ में निम्नलिखित गौण कथाएँ हैं—(१) लाखीरान और अटल की प्रेम कहानी। इसमें रोमांस, सच्चा प्रेम, आत्म-बलिदान और धीरता का मणिकांचन सम्मिश्रण है। (२) गयासुद्दीन और उसके पुत्र नसीर की कामुकता (३) सिकन्दर का आक्रमण

तथा क्रोध (४) गुजरात में महमूद बघरा के अगणित विजय और रक्तपात (५) नटो-पोटा पिल्ली की जासूसी और लाखी निन्ती की वन्दी बनाने के सतत प्रयत्न (६) राजसिंह और कला की कहानी ये गौण कथाएँ स्वतन्त्र रूप से भी मनोरंजक हैं। लाखीरानी और अटल की कहानी का विकास नहीं किया गया, अन्यथा लाखीरानी मृगनयनी से कम नहीं है। गयासुद्दीन और उसके उत्तराधिकारी नसीरुद्दीन की अत्याचार प्रियता और अत्यासी, मुसलमान शासकों के चरित्र तथा मनोवृत्ति पर प्रकाश डालती हैं। बघरा हाम्य रस की सृष्टि करता है। पिल्ली पोटा आदि नट-समाज मृगनयनी एवं लाखी के चरित्र विकास में सहायक हैं। राजसिंह और कला बैजू के साथ गुप्तचर के रूप में कार्य करते हैं। सिकन्दर का खालियर आक्रमण एक ऐतिहासिक सत्य है।

बर्माजी ने बड़े कौशल से उपरोक्त प्रामाणिक कथाओं को मूल कथानक में जोड़ दिया है। ये किसी न किसी प्रकार मानसिंह मृगनयनी में संयुक्त की गई हैं ये पृथक् न रह कर प्रमुख कहानी में मिले-जुले हैं। इनमें नं० १, ५, ६, कथाएँ चरित्र विकास तथा रोचकता वृद्धि में सहायक हैं, शेष ऐतिहासिक वातावरण की सृष्टि करती हैं।

कथानक जटिल न होकर जल धारा की तरह सरल और सुबोध है। तमाम सूत्र अलग अलग रह कर भी मूल कथानक को समझने में कोई बाधा उपस्थित नहीं करते। पाठक को ऐसे जटिल वातावरण में नहीं डाला जाता कि वह विभिन्न सूत्रों को पृथक् न कर सके। ऐतिहासिक वातावरण को भी रोचक बनाकर प्रस्तुत किया गया है।

कथानक में वर्णित घटनाएँ तेजी से अपने मूल उद्देश्य की ओर चलती हैं। मृगनयनी के चरित्र का प्रत्येक गुण गुलाब की पंखुरी की तरह खुलता जाता है। इनको इस प्रकार मजाया गया है कि कार्य-कारण का सम्बन्ध बना रहता है। लेखक के विवेक या बरवश कथा सूत्र को मिला डालने का दाप कहीं नहीं है। स्पष्ट एवं सुबोध रीति से घटनाएँ परस्पर गुम्फित कर दी गई हैं।

कथानक छोटा सा है, किन्तु लेखक ने अपने पात्रों को भिन्न भिन्न नई परिस्थितियों में डाल डाल कर रोचकता और कौतुहल बनाये रखा है। पोंटा और पिल्ली का नृत्य, निन्नी और लाखी का का बढ़ता हुआ प्रलोभन, अन्त में कंगूरे की हँसी करने में पिल्ली की मृत्यु रोचक तो है ही, गौण पात्रों को प्रकाश में लाती है। स्वयं भी कार्य-कारण से जुड़े हुए है। मिकन्दर, गयासुद्दीन, महमूद, बघर्ग मानसिंह के चरित्र पर प्रकाश डालते हैं।

परिच्छेद ६३ में भूकम्प की घटना को जोड़ दिया गया है। इससे हास्य रस की उत्पत्ति होती है। महमूद बघर्ग को गिरते पड़ते देखकर हम हँसे बिना नहीं रहते। इससे कथानक में रोचकता, भी आ गई है। संक्षेप में सम्पूर्ण कथानक में रोचकता, कार्य-कारण सम्बन्ध और कलापूर्ण संगुफन हैं। नाना घटनाओं के संघर्ष में पाठक का जी ऊबने नहीं पाता।

पात्र एवं चरित्र चित्रण

‘मृगनयनी’ के अधिकांश पात्र ऐतिहासिक हैं, जिन्हें लेखक ने इतिहास मिद्ध तर्कों और प्रमाणों पर आधारित किया है। किवदन्तियों का सहारा भी बहुत कम लिया है। कुछ गौण काल्पनिक पात्रों की सृष्टि मुख्य पात्रों के चरित्र गौरव की प्रतिष्ठा के लिये की गई है। गौण पात्रों के निर्माण में ऐतिहासिक उपन्यासकार यह ध्यान रखता है कि वे मुख्य पात्र पात्रियों से सम्बन्धित होकर ही प्रकट हों, आकाशदीप की तरह न लटकते रहें।

इन सब पात्रों को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है--

(१) उच्च सामन्तीय वर्ग :—इसके अन्तर्गत मृगनयनी, राजा-मानसिंह, अटल, लाखी, महमूद बघर्ग, नमीरुद्दीन, मिकन्दर, सुमन

मोहिनी सेनानायक एवं सैनिक इत्यादि सम्मिलित है। इनका चित्रण मध्यकालीन सामन्तों या तत्सम्बन्धी नायकों जैसा हुआ है।

(२) कला प्रेमी वर्गः—इसमें बैजूबावरा, कला इत्यादि संगीत प्रेमी, व्यक्ति शामिल हैं। मृगनयनी इस वर्ग में भी आती है। वे बहुत ही कम समय में नृत्य, शौन, चित्रकला में पारंगत हो जाती है। इसी में तरह तरह के तमाशे, खेल और अनगिनत करतब दिखाने वाले नर्तनियां भी शामिल है।

(३) ग्रामीण जनताः—जो गरीबी, असमर्थता और रूढ़िवादिता में डूबी हुई है। निन्नी और लाग्गी का प्रारम्भिक जीवन इसी वर्ग में व्यतीत होता है। राई के भोले पर जाति-पांति के कानूनों से बंधे गांव वाले, शास्त्रीय ज्ञान पर घमण्ड करने वाला रूढ़िवादी पुजारी बोधन भी इसी में है।

इन तीनों वर्गों के पृथक् पृथक् गुण हैं। सामन्त लोग विलासप्रिय धार्मिक दृष्टि से कट्टर, सुरा सुन्दरी में मस्त, चापलूस खुशामदियों से घिरे हुये हैं। सुलतान गयासुद्दीन तथा नसीरुद्दीन ताम्बी, लालुप अतृप्त कामनाओं से पुंज है। कला प्रेमी वर्ग में बैजूबावरा गले की मधुरता और संगीतशास्त्र के ज्ञान के लिये विख्यात है। ग्रामीण जनता अन्धकार और निर्धन की शिकार है।

मानसिक वृत्तियों तथा चरित्र के उत्थान-पतन की दृष्टि से भी इन पात्रों को दो वर्गों में विभक्त कर सकते हैं :—

(१) आदर्शवादी पात्र—इस वर्ग में चरित्रवान व्यक्ति आते हैं जो शील गुण सम्पन्न है तथा अपनी निष्ठा से समाज की रूढ़ियों को तोड़कर सुधार के इच्छुक हैं। मृगनयनी, लाग्गी, अटल, राजा मानसिंह, बैजू आचार्य इस वर्ग के हैं। अटलसिंह समाज की पुरानी व्यवस्था से सतत युद्ध करता है, जाति बिरादरी वाले उसके पीछे रहते हैं पर वह दृढ़ता से उनका मुकाबिला करता है। लाग्गी पिल्ली

दमन करती और बीरवाला की तरह मरती है; मानसिंह रूढ़िवा-
दिता को तोड़ता हुआ सतत प्रगतिशील बना रहता है। विजयजङ्गम
के विचार भी बड़े प्रगतिशील हैं। पुरानी जीर्ण-शीर्ण परम्पराओं और
अन्ध विश्वासों को वह नये साँचे में ढालता है। बैजू आचार्य और
प्रचलित राग-रागिनियों में परिवर्तन लाकर अपनी मौलिक प्रतिभा का
सबूत देता है। रानी मृगनयनी समाज बन्धन और जाति बन्धन
की शृंग्वलाओं को तोड़कर अपनी बीरता और सौन्दर्य में सर्वोच्च
स्थान प्राप्त करती है। वह उदार, संयमी, कला प्रेमी और आत्म
त्यागी रमणी है। संक्षेप में, ये सभी पात्र किमी आदर्श की आर
इंगित करते हैं। हमें इनमें कर्तव्य शीलता, उदारता, नियम संयम;
बीरता और त्याग की शिक्षाएं प्राप्त होती हैं।

(२) दुष्टप्रवृत्तियों से आक्रान्त वर्ग—इसमें ईर्ष्या एवं कुटिलता
की मूर्ति मुमनमोहिनी तथा उनका वर्ग; रूढ़िवादी ब्राह्मण बांधन,
विलास और भोग वासना की मूर्ति नसीरुद्दीन, अत्याचारी महमूद
बघर्गा; सुरा सुन्दरी में मस्त रहने वाला स्वभावतः विलासी गया-
सुद्दीन; चापलूस खाजा मटरू, लोभी और पड़यन्त्रकारी पोटा, पिराी
नट इत्यादि शामिल हैं। इनमें मुसलमान शासक कट्टर, विलासी,
हिन्दुओं से घृणा करने वाले हैं। वे शक्ति तथा यौवन के मद में मस्त
हैं। वर्मा जी ने इन सबका चित्रण एक यथार्थवादी कलाकार की
दृष्टि से किया है। संसार में गुणी अवगुणी, देवता राक्षस, अच्छे
बुरे सभी हैं। वर्मा जी के उपन्यास-संसार में भी सभी मौजूद हैं।
कुछ काल तक ऐसा प्रतीत होता है कि यह विलासी वर्ग विजयी
हो जायगा, लेकिन अन्त तक पहुँचते पहुँचते सत्य की विजय हाती
है और अन्यायी कुटिल वर्ग पराजित होता है। अनाचारी पात्रों के
दमन के चित्रण में वर्माजी ने कान्य न्याय (Poetic Justice)
की रक्षा की है।

प्रमुख पात्रों का अध्ययन

१—मृगनयनी:—

उपन्यास का नामकरण निन्नी, जो बाद में महारानी मृगनयनी बनती है, के नाम पर हुआ है, जिसका संकेत है, कि उपन्यासकार की दृष्टि मुख्यरूप से इसी नारी के शारीरिक, मानसिक और नैतिक सौन्दर्य के प्रदर्शन की ओर रही है।

गई ग्राम में हमें उसके दर्शन तब होते हैं, जब वह यौवन में प्रवेश कर रही है। सौन्दर्य उसका सबसे मोहक मादक गुण है। ग्राम के उन्मुक्त बातावरण में पलकर वह स्वस्थ, बलिष्ठ और साहसी बन गई है। शारीरिक शक्ति उसमें इतनी है कि मरे हुये सुअर को पीठ पर लाद कर ले आती है। बाण विद्या, लक्ष्यबोध में वह अद्वितीय है। शिकार करते हुये एक ही तीर में वह अरने भैसे या सुअर को मार गिराती है। एक बार उसने घायल अरने भैसे के सींग मरोड़ कर उसे पीछे ढकल दिया। युद्ध विद्या के भी उदाहरण मिलते हैं। वीरता, आत्म-निर्भरता; साहस, स्वावलम्बन जैसे गुण गरीबी का जीवन व्यतीत करने हुये भी उसमें विकसित हो जाते हैं। एक दृश्य देखिये—होली के दिन की थकावट ने अटल को निश्चेष्ट कर दिया था। खेत की रखवाली के लिये जाना था.....

“निन्नी ने कहा, “मैं जाती हूँ खेत के मचान पर, तुम घर पर सो जाओ।”

“वाह ! वाह !! तुम भी तो थक गई होगी ?”

“मैं तो नहीं थकी। खेत को रखा लूँगी, चिन्ता मत करो।”

“जंगली भैसें, साबर, चीतल, सुअर आयेंगे और खेती को मिटा कर जायेंगे। एक भपकी आई और मैदान साफ।”

“और तुम रात भर जागते रहोगे ?”

“यह भी तो एक दुबिधा की बात है ।”

“कोई दुबिधा नहीं । कमान, तरसक भरे तीर और तलवार लिए जानी हूं । तुम भी चलो । बारी बारी से जागें और सांवेगें ।”

“यह ठीक है । चलो ?”

“बे दोनों हथियार लेकर खेत पर चले गए । गत होते ही अटल मचान पर सां गया । निन्नी बगल में तीर कमान और तलवार रखे हुए बैठी रही ।”

उपरोक्त पंक्तियों से मृगनयनी के साहस, शक्ति, आत्मनिर्भरता और शिकार कुशलता का अच्छा परिचय मिल जाता है । वह स्वभाव से ही वीर बाला है । गरीबी में रहकर भी वह पूरी चरित्रवान, दृढ़, उत्कर्ष की अभिलाषिनी है । वह सतत जागरूक, मनर्क है । आलस्य उसे नहीं दवा सकता । ग्राम जीवन से ही उसे संगीत का शौक है । वह गाती है । उसका स्वयं अपने गाने का ढङ्ग भाता है ।

प्रकृति के सुन्दर दृश्यों को वह प्यार करती है । प्रकृति की गोद में पलने के कारण सरिता, निर्भर, वन, पर्वत, शिखर, उगता हुआ चन्द्रमा, महकते हुए वृक्ष उसे प्रिय है । ये उसके सदा के सहचर हैं । वह अपने खेत का नहीं छोड़ सकती, राई नदी से अलग नहीं हो सकती । एक उदाहरण लीजिये—

निन्नी की दृष्टि कभी खेत की उँघती हुई बालों पर, कभी चमकती हुई चंचल अर्मियों पर, कभी दूरवर्ती धूमिल पहाड़ पर और कभी निकटवर्ती पहाड़ के शिखर पर जा रही थी—जहाँ भी रहूँ इस प्यारी नदी की दमकती हुई कल्लौलिनी धार को अपने पास रक्खूँ । बाहर जाऊँ तो क्या इसको बांधकर, समेटकर नहीं ले जाया जा सकता ? उँघती लहगती बालों को किसी कागज पर उतार लिया जाय । पहाड़ों की ऊँचाइयों को एक स्थल पर क्यों न इकट्ठा कर लूँ ? बड़े बड़े पेड़ों के बन्दनवार बना लिये जायँ और डालियों पत्तों के साजों

के भरोखे । उनमें से चाँदी की 'कड़ियों वाली लहरों का नाचता हुआ देखा जाय और फिर मैं गाऊँ—जाग परी मैं पिय के जगायें'—लहरें बाँदी और मौतियों के हार से पहिने हुये इठलाती हुई नाचती रहेंगी, बन्दनवार सदा हरे रहेंगे, पत्तों की झिलझिलियाँ निरन्तर चांदनी की भीगी हुई चमक और फूलों की महक से लदी रहेंगी—उसने सोचा ।

मृगनयनी आदर्श के रूप में प्रतिष्ठित की गई है । उसमें सौन्दर्य, शिव और सत्य तीनों का संतुलन है, आदर्श और यथार्थ का मधुर समन्वय है । मानसिंह के लिये वह एक प्रेरक शक्ति है । वह उसे कायरता, मोह, विलास और अकर्मण्यता से बचाकर कर्तव्य मार्ग की ओर उन्मुख करती है ।

राजा मानसिंह तोमरः—

मानसिंह १४८६ से १४९६ तक ग्वालियर का राजा रहा । इसका चित्रण इतिहास ग्रन्थों में उपलब्ध सामग्री के आधार पर हुआ है । वह वीर और योग्य शासक था । अंग्रेज इतिहास लेखकों ने उसके राज्यकाल को ताम्र शासन का स्वर्ण युग कहा है । मिकन्दर ने ग्वालियर पर पाँच बार आक्रमण किया, पाँचों बार उसे मानसिंह के सामने से लौट जाना पड़ा ।

यदि मृगनयनी स्त्री पात्रों में सर्व श्रेष्ठ है, तो मानसिंह पुरुष पात्रों में आदर्श है । वह प्रजा वत्सल, उदार, कला-प्रिय, युद्ध कला और सैन्य संचालन में निपुण है । उसमें सर्वतांमुखी प्रतिभा है । ललित कलाओं का प्रेमी है । संगीत, चित्रकला और नृत्य के प्रति उसकी स्वाभाविक रुचि है ।

धर्म क्षेत्र में वह उदार और धर्म भोरु है पर रूढ़िवादिता, पुरान पन्थी और धार्मिक कट्टरता से घृणा करता है । धर्म में भी वह विवेक और तर्क से काम लेता है, जाति-पाँति में उसे विश्वास नहीं । पुजारी

पुरोहितों के पाखण्ड और अन्ध विश्वासों के प्रति उसे कोई श्रद्धा नहीं। धर्म के व्यर्थ के वाद विवाद—शैव और वैष्णवों के वाक् युद्ध में उसे कोई दिलचस्पी नहीं। वह गीता में निर्देशित कर्म मार्ग में विश्वास करता है। एक स्थान पर वह कहता है—“कर्म मुख्य है। जो इसमें बचना चाहते हैं, वे दांयें, बांयें पगडाण्डियां ढूँढ़ते हैं।” ये शब्द उसकी बुद्धि विवेक तर्क और प्रगतिशीलता के परिचायक हैं।

शिल्पकला और भवन-निर्माण कला में उसे दिलचस्पी है। मानमन्दिर, गूजरीमहल, इत्यादि उसकी भवन-निर्माण कला के नमूने हैं।

प्रजा वत्सलता उसका आदर्श है। जनता में घूम घूम कर वह प्रजा के दुःख दर्द को मालूम करता है। एक मजदूर कहता है—“सुना था महाराज ब्राह्मणों, पण्डितों और सेठों के हैं, आज जाना कि मजदूरों और किसानों के भी हैं।

उसमें वे दुःप्रवृत्तियाँ नहीं हैं, जो तत्कालीन सामन्तों में पाई जाती हैं। नौ रानियों का रखना तथा अन्य रानियों की उपेक्षा ही खटकने वाली बात है। संभव है, तत्कालीन बहु विवाह प्रथा का यह दुष्परिणाम हो।

लाखारानी

चरित्र की वीरता, धैर्य, सौन्दर्य और शिकार में वह मृगनयनी से किसी प्रकार कम नहीं है। प्रारम्भिक जीवन में निन्नी और लाखी एक सी ही थी, साहसी और शक्तिपूर्ण है। आयु लगभग १५-१६ वर्ष परन्तु निन्नी बलिष्ठ और पुष्ट काया की, लाखी दुबली और छुरेरी। सौन्दर्य में भी दोनों अप्रतिम हैं। निन्नी की आंखें बड़ी बड़ी और होठों पर फड़कन थी। लाखी की भी उतनी बड़ी तो नहीं, परन्तु काफी बड़ी आंखें थीं। उनसे हँसी भरती थी।

वह धीरे अटल से प्रेम करती है। उसका प्रेम आदर्श है, जिसमें प्रेमी के लिये आत्मबलिदान करने की भावना है। वह सस्ते रोमांस में प्रभावित नहीं है। वह जीवन के घोर संघर्ष और कठोरता में पलने वाला सच्चा प्रेम है। विवाह के पश्चात् समाज द्वारा वहिष्कृत होकर भी पतिव्रत धर्म को नहीं छोड़ती। पिल्ली के प्रति उसके मन में ईर्ष्या है, क्योंकि वह उसके पति को छीन लेना चाहती है।

उसमें स्वाभिमान और अटूट साहस है। सामाजिक कोप की परवाह नहीं करती। गयाम के मैनिको का मार भगती है। उसका सर्वोच्च वीर रूप वह है, जब वह दुर्ग की रक्षा में प्राणात्मर्ग करती है। वह एक सुन्दर, शक्तिशाली, उदार, जाति-पाति के विरुद्ध विद्रोही, स्वाभिमानिनी महिला है। मरते मरते तक वह अपने पति की सुख कामना करते हुए कहती है कि 'अपनी जाति में विवाह कर लेना।' अटल ने जाति-विवादों की संकीर्णता के कारण उससे विवाह कर जो दुःख सहे, उसका उसे क्षांभ रहा। नारी सुलभ लज्जा वस्त्राभूषणों के प्रति मोह, स्वाभिमान उसमें वर्तमान है।

अटल—

निन्नी का भाई अटल लाखी का प्रेमी है। जाति विवादों के प्रतिकूल लाखी से विवाह कर असंख्य कष्ट सहन करता है। वह सच्चा प्रेमी है, वीर है और सब परिस्थितियों में अपनी प्रेमिका के साथ रहता है। राई से युद्ध करते हुए वीर गति प्राप्त करता है।

शारीरिक शक्ति, वीरता, स्वाभिमान, और साहस उसमें प्रचुरता से है। युद्ध काल की वस्तुस्थिति खूब समझता है। वह भाग्यवादी है पर विपम परिस्थितियों से भयभीत नहीं होता। आदर्श प्रेम और वीरत्व उसके चरित्र की दो बड़ी विशेषताएँ हैं।

गौण चरित्र

बोधन:—

पुरानी रूढ़ियों और अन्धविश्वासों में फंसा हुआ पुजारी है राई ग्राम में उसकी धाक है। उसे रूढ़िवादिता, ब्राह्मणों की अखण्ड सत्ता, राजा परमेश्वर का प्रतिनिधि है—में विश्वास है। वर्णाश्रम धर्म को वह श्रेष्ठतम समझता है। अटल और लाखी का अन्तर्जातीय विवाह करा कर वह वर्णाश्रम धर्म को लात नहीं मार सकता। ब्राह्मत्व की श्रेष्ठता पर विश्वास करता है। उसमें कुछ दंभ और जातिगत अभिमान की मात्रा है, शास्त्रार्थ के लिए वह एक दम प्रस्तुत हो जाता है। संक्षेप में, वह निर्भीक, स्वधर्म निष्ठित, मृत्यु से निभय, रूढ़िवादी पुजारी है, जो पुरातन धर्म का प्रतिनिधित्व करता है।

विजयजंगम:—

स्वयं कर्मठ और कर्म मार्ग में अटूट विश्वास रखने वाला तर्क-बादी उदार आचार्य है। शरीर की कार्य शक्ति पर उसकी आस्था है 'जीवन में काम करना, श्रम से रांटी का उपार्जन करना और शिव का नाम लेना, यही गौरव है। इसी में जीवन की सार्थकता है।' ये उसके आदर्श वाक्य हैं। वह राजा को भी कर्म की सलाह देता है। उसकी प्रमुखता यह है कि वह वर्ण व्यवस्था की कट्टरता नहीं मानता। जहाँ बांधन अटल-लाखी का विवाह कराने को तैयार नहीं होता, वह सहर्ष विवाह सम्पन्न कराता है। वह शैव है, जीव हिंसा को पाप समझता है, महान् कलाकार और विद्वान है। बांधन और विजय दो विपरीत गुणों वाले ब्राह्मण हैं। बोधन में जहाँ प्राचीनता है विजय नवीन विचारधारा का प्रतीक है। उसका व्यक्तित्व ऐतिहासिक है और वह लिंगायन सम्प्रदाय की विचार धारा में आस्था

रखता है। युद्धों और शिकार में साथ रह कर तथा कला की उपासना के द्वारा वह राजा मानसिंह का हृदय जीत लेता है। वीणा-वादन में आचार्य बैजू से उसकी प्रतिद्वन्द्विता चलती रहती है।

बैजू आचार्य :—

अकबर के दरबारी संगीतज्ञ तानसेन का समकालीन, मानसिंह मृगनयनी के प्रधान गायक गले की मधुरता और वीणा पर अगुलियों की चतुराई के लिये विख्यात, जाति के ब्राह्मण, गायन वादन बढ़ाने में उसको दिन रात की भूख प्यास अवसर-कुअवसर की परवाह नहीं रहती थी। संगीत के क्षेत्र में विख्यात रहे और इनके सहयोग से राजा मानसिंह को संगीत के प्रति रुचि बढ़ी। स्वभाव से विनम्र और सतोषी वृत्ति के हैं। अन्तर्मुखी चित्र वृत्तियों और अपने क्षेत्र में अप्रतिम हैं। प्रतिभा और मौलिकता का सम्राट है।

गयासुद्दीन :—

महमूद खिलजी के मरने के पश्चात् उनका पुत्र गयासुद्दीन उत्तराधिकारी हुआ। उसके समय में कालपी हाथ से चली गई, परन्तु फिर से अधिकृति करने की तीव्र इच्छा सदैव उसके मन में रही। उसने मेवाड़ के साथ सन्धि कर ली। वह आशा करता था कि किसी दिन राजपूतों की सहायता से गुजरात और दिल्ली का मुकाबला कर लूँगा। उसका स्वभाव अधीर, उद्धत, कामुक और कपट प्रिय था। मदिरा पीने पर वह सहज स्वाभाविक मानव सा हो जाता था। पीता अधिक नहीं था परन्तु पी लेने पर उसकी मानवीयता, उपेक्षण, हान्य प्रियता तथा कामुकता बढ़ जाती थी। हिंदुओं के साथ वह अत्याचार नहीं करता था। कट्टरता का वह मजाक उड़ाया करता था। इसलिए मुल्ला वर्ग उससे रुष्ट था। कामुकता के अधेपन में वह पुरुष और स्त्री की पहिचान नहीं रखता

था। वह योग्य शासक था, और राजनीति का उसे अच्छा ज्ञान था। जहर देकर उसे मार डाला गया।

नसीरुद्दीन :—

का पिता की तरह कामी और विलासी पुत्र है। राजनीति, प्रजा के सुख समृद्धि, या देश की उन्नति में उसे दिलचस्पी नहीं है। वह सुरा-सुन्दरियों में रह कर अपनी उदास वासना और काम पिपासा को तृप्त करने को ही सबसे अधिक सुख समझता है। मटरू उसे दिन रात नाच रंग वासना की पूर्ति और अनैतिकता की ओर उन्मुख करता रहता है। कहते हैं मालवा-सुलतान नसीरुद्दीन की १५ हजार वंगमें थी; राज्य इसने पाया था पिता को विप देकर वासनाओं की तृप्ति के लिये। लगभग १०० वर्ष पश्चान् जहांगीर ने इसकी पर्यायी, गन्दगी, पाशविकता, का हाल सुना था, तो उसे इतना क्रोध आगया था कि उसने उसकी कब्र तक उखड़वा कर फेंक दी थी। उसका सम्पूर्ण जीवन कामवासना की तृप्ति में गया।

कथोपकथन

मृगनयनी के कथोपकथन उसके पात्रों के चरित्र-चित्रणों में निजी महत्व रखते हैं। बर्माजी ने कथोपकथनों का लिखने में विशेष ध्यान और मनोवैज्ञानिकता का परिचय दिया है। सहज स्वाभाविकता, रमणीयता और नाटकीयता इनके विशेष गुण हैं। प्रत्येक पात्र की वय, परिस्थिति, स्वभाव, रुचि, मनोभावनाओं की अभिव्यक्ति इन के द्वारा हुई है। कहीं बड़े, कहीं छोटे, कहीं अति सज्जित रख कर बर्मा जी के नाटकीयता (Dramatic Touch) के स्थूल उत्पन्न किए हैं। इन वार्त्तालापो के अध्ययन से हमें पात्रों के शील गुण स्वभाव का परिचय मिल जाता है। पात्रों के मानसिक विकास के अनुकूल ही भाषा का प्रयोग किया है।

उदाहरण स्वरूप, कुछ स्वाभाविक छोटे कथोपकथन देखिए —

‘व्याज समेत पा लिया’, लाग्गी गिलगिलानी हुई बोली, ‘तुम्हारे गारे गालों पर कैसा बैठा है। अडा हा हा !!’ डिठोना सा लग गया !!! अब किसी की नज़र नहीं लगने पावेगी !!’

‘तुम्हारे एक गाल पर लगने से रह गया है, तो, तुमको किसी की दीठ लग जावेगी !’

‘हँ ! तो लगा दो, नहीं तो अपने हाथ से लगाये लेती हूँ ।’

‘बाहर चलो, कोई न कोई लगा देगा ।’

‘कोई कैसे लगा देगा ? जो तुमको लगा सकता है वही तो मुझको लगा सकेगा ।’

‘भावजें है बाहर और कुछ बहिनें ।’

‘तुम्हारी है कोई ननद ?’

‘अरी हिण्ट’—लाग्गी हँस पड़ी ।

कथोपकथन में सजीवता है। पात्रों में जीवन छलका पड़ता है। स्त्री सुलभ लज्जा, सौकुमार्य, यौवन के प्रभात की उसमें और ठिठोली स्पष्ट हो जाते हैं। ये कथोपकथन मनावैज्ञानिक दृष्टि से भी गहरे और सच्चे हैं।

कहीं कहीं पात्र एक-दूसरे के चरित्रों का विश्लेषण करते हैं और उनके स्वभाव, गुण शील, प्रकृति के विषय में जानकारी प्राप्त करा देते हैं.—उदाहरण स्वरूप देखिए:—

उपस्थित जनता ने मानसिंह का जयकार किया । तमाशा देखने वाली स्त्रियों में से एक-दूसरे से कहा: —

‘अपना राजा है बहुत अच्छा । बड़ा रमिया है । है न ?’

‘रमिया न होता तो उसको हाथी पर कैसे चढ़ा देता । सलहज, है, उसकी । साले को भी हाथी पर चढ़ा दिया ! अच्छा तो रहा !’

‘वाई ! रूप-स्वरूप से बिठला दिया है हाथी पर । क्या सचमुच मुर्कों की फेला को रसती और खसैनी पर से नट खल्लासने मगर सारी !’

‘की-तो लाग्गी के बहदुरी । जनता तो कहसा पड़ेगा ।’

‘इतनी कि राजा घांड़े पर और वह झोंकरी हाथी पर ! हाँ रूप की लुनाई है उसमें । तुमने लखा या नहीं, जब हाथी पर चढ़ने को जाने लगी, तब कैसी आंखी उठाई थी राजा पर ?’

‘राजा उसको ग्वालियर ले जाकर महलों में डाल लेगा ।’

‘राजा जो ठहरा, चाहे जो करे, पर है अच्छा । ठीक समय पर पर आगया, नहीं तो नरवर राख हा जाता उसी ने बचाया ।’

—मृगनयनी पृष्ठ ३०१

इस कथोपकथन से पाठकों को मानसिकता, शील, प्रजावत्सलता, वीरता, सलहज का आदर तथा लाखागती का सौन्दर्य, बहादुरी, आत्म त्याग, साहस इत्यादि प्रकट हो जाता है ।

उपन्यास में अनेक स्थानों पर हृदयगत भावनाओं तथा अन्तःकरण में होने वाले मन संघर्ष को मर्मस्पर्शी ढङ्ग से चित्रित किया गया है । इस विधि का प्रयोग कम है, पर पात्रों को सर्जीव और सचाई दिखाने का यही उपाय है । जब निन्नी राजमहलों में आती है, तो उसके मन में पूर्व स्मृतियाँ आती हैं । वह सोचती है:— ‘वह सचान, वह चांदनी रात तिममें ललहाते हुए अनाज के खेन जैसे किमी ललक के साथ बात करना चाहता हों, सांभर चीनल की बोलियाँ, बगल में रखा हुआ धनुष-बाण, लाखी की ठिठौली क्या सब सदा के लिए हाथ में छुटक गए ? क्या मैं जा न सकूँगी ? क्या यहीं बन्द होकर रहना पड़गा ? महाराज ने वचन दिया था कि पर्दे में नहीं रहोगी । वह निभायेंगे, अवश्य निभायेंगे । नहर की खुदाई का आरम्भ उन्होंने कितनी जल्दी कर दिया ! पर बाहर भी निकलूँगी तो सबेरे कहाँ जाऊँगी ?’

उपर्युक्त मन. संघर्ष से मृगनयनी के आन्तरिक भावों तथा स्थिति का ज्ञान हो जाता है । सर्वत्र वास्तविकता और स्वाभाविकता की रक्षा का प्रयत्न किया गया है, कृत्रिमता नाम-मात्र को भी नहीं है । चर्माजी की शैली में यथार्थवादी चित्रों को स्थापित करने की शक्ति है । कहीं

कहीं कलात्मकता और सरसता का अपूर्व सम्मिश्रण है, जैसे प्रेम सम्बन्धी समस्त वार्त्तालाप बड़े मधुर और हृदय-स्पर्शी बन पड़े हैं। एक प्रसंग देखिये—

‘निन्नी उससे लिपट गई। लाखी ने प्रतिरोध नहीं किया। बोली, ‘सचमच बतला तेरे और भय्या के बीच में कभी कुछ ऐसी वैसी बातचीत हुई है न ?’

‘लाखी ने मुँह खिपाकर कहा, ‘ऐसी वैसी क्या बात ?’

‘कोई प्यार की बात। जैसे कथा कहानी में सुनते आते है।’

‘हट !’

‘ऐ हैं हैं ! हट बट नहीं, ठीक ठीक बतला।’

‘हमारी तुम्हारी जात में ऐसा होता कैसे हो सकता है ?’

‘क्यों नहीं हो सकता है ! भय्या कहते थे हो सकता है।’

इस उपन्यास के कथोपकथनों में कथासूत्र को आगे बढ़ाने और चरित्र की विशेषता दिखाने के साथ पूर्व गेचकता, यथार्थता और प्रभावशीलता है। कहीं कहीं भावभङ्गी मुक्त ढङ्ग के भी कथोप-कथन हैं।

प्रो० हरस्वरूप माथुर ने इसके विषय में सन्य ही लिखा है, ‘इस उपन्यास में समन्वित-पद्धति पर लिखे गए अनेक कथोपकथन हैं। इसमें कला का जैसा संयमित और निगुरा रूप देख पड़ता है, वैसा बहुत कम उपन्यासकारों की कृतियों में दृष्टिगत होता है। यह उप-न्यासकार की उच्च कोटि की रचना का परिचायक है। न तो कृत्रिमता का बोध होता है, न वार्त्ता के स्वाभाविक प्रवाह में व्याघात पड़ता है।’ १

शैली:—

घटनायें :—

उपन्यास घटना प्रधान है। एक के अश्वान् दूसरी, तीसरी, चौथी निरन्तर घटनाएँ हमारे सामने चित्र-पट की तरह आती रहती हैं। प्रारम्भिक आधे भाग में निन्नी तथा लाखी के ग्रामीण संघर्ष के चित्र हैं। इनमें आखेट, हाली के खेल और ग्राम्य जीवन की घटनाओं में रोचकता और सजीवता है। अधिकांश घटनाओं में कार्य कारण का सम्बन्ध है। उपन्यासकार ने इतिहास में सम्बन्धित पृष्ठ भूमि ले कर कई घटनाओं को एक साथ उठाया है, पर मूल तथा गौण चरित्रों का इनमें अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। कुछ घटनाओं का समावेश केवल मनोरंजन मात्र के लिये हुआ है, जैसे प्रारम्भिक होली के चित्र, गांव के मन्दिर के दृश्य, आखेट, नट नटनिया के खेल इत्यादि। शैली में सर्वत्र स्पष्टता, बोधगम्यता, रोचकता और पाठक से कहानी में रुचि उत्पन्न करने के गुण है।

वर्णन :—

उपन्यास में वर्णनों की अधिकता है। उपन्यासकार ने आखेट, जंगलो, ग्रामीण गीति रिवाजों, हाली, फसल कटाई, नटों के खेलों, जंगली जानवरों, युद्धों, महलों के लम्बे-लम्बे सजीव चित्र है। पात्रों के हाव-भाव चित्रण करने में मनोवैज्ञानिक शैली अपनाई गई है। वर्मा जी ने पात्रों के बाह्य एवं आन्तरिक मनोभावों का समस्पर्शी वर्णन किया है—जैसे—नट बेड़ियों के एक छोटे से डेरे का वर्णन देखिए :—

“नट बेड़िये दस-पन्द्रह से अधिक न होंगे। पेड़ों की भुग्मुट में थुमियों के ऊपर घास और पत्तों से कुछ भोंपड़ियाँ छा रक्खी थीं।

एक बड़े से भोंपड़े में उनके दो गधे, दो भैंसें और बकरियाँ बँधे हुये थे। कुछ बन्दर गूँटियों से, एक भोंपड़ी के किनारे कमठे, तीरो भरे तरकस और लम्बे लुरे रखे हुये थे। छोटे बच्चे डाल में टंकी हुई डलियों में थे। पांच सात अधेड़ और जवान स्त्रियाँ खाना पकाने में लगी हुई थीं। केश लम्बे थे। पुरुष फटी मैली धांतियां पहिने हुये थे, स्त्रियां चिथड़ों गुदड़ोंदार पायजामों में। आदमी कोई नहीं आढ़े थीं। उरोजो पर केवल चोली कमे हुए। कानों में जूमे की बालियां और नाक में पीतल के बड़े बड़े नथ। गले में कांच के रंग विरंगे गुरियों की मालाएँ।

उपरोक्त वर्णन में लेखक की सूक्ष्म दृष्टि का परिचय मिलता है मनुष्य के विभिन्न कार्यों, छोटी बड़ी विशेषताओं, पोशाकों, रहन-सहन के ढङ्गों को गहराई से देखकर सब कुछ कुशलता से चित्रित कर दिया गया है।

पात्रों के रेखा चित्र

पात्रों के रेखाचित्र बड़ी कुशलता से दो दो तीन तीन पंक्तियों में ही खींचे गए हैं। इन रेखा चित्रों की सबसे बड़ी विशेषता उनकी सजीवता है। चित्रांकन में वर्मा जी को अपूर्व सफलता प्राप्त हुई है। कागज पर उतारे हुये ये चित्र जैसे स्वयं बोल पड़े हैं। उपन्यास में सर्वत्र प्राणों का स्पन्दन और हृदय की धड़कन है। सजीव शैली में लिखे गये कुछ चित्र देखिये—

“दोनों (लाखी और निन्नी) समवयस्क थीं—आयु लगभग १५ १६ वर्ष, परन्तु निन्नी बलिष्ठ और पुष्ट काया की, लाखी दुबली और छरैरी।”

“राजा मानसिंह युवावस्था के आगे जा चुका था, बड़ी काली आँखें, भरी भौहें, सीधी लम्बी नाक, चेहरा भरा हुआ कुछ लम्बा।

ठोड़ी दढ़, होठ सहज मुसकान वाले । सारा शरीर त्रैमे अनवरत--
व्यायाम से तपाया और कसा गया हो । कद लम्बा और छाती चौड़ी,
घनी नोकदार मूछें ।”

‘अटल हट्टा कट्टा युवक था । आंस भीग चुकी थी । मिर के बाल
लम्बे थे । इसलिये सारी आकृति में भीमता आ गई थी । कई साल
के कठोर जंगली जीवन ने उसके लम्बे चेहरे की लम्बी नाक को कुछ
और लम्बा कर दिया था ।’

‘महमूद बघर्रा, साढ़े तीन हाथ से अधिक ऊँचाई का था, परन्तु
चौड़ा इतना था कि बौना मालूम होता था । . . . आयु लगभग पैंता-
लीस वर्ष की थी । मूछें इतनी लम्बी कि मिर पर उनकी गाँठ बाँधता
था और दाढ़ी नाभि के नीचे तक फटकार मारती थी ।’

वर्मा जी की लघुदाशनी स्कैच शिल्प प्रतिभा उपरान्त उदाहरणों
में देखी जा सकती है । उनके उपन्यास ऐसे ऐसे अनेक व्यक्तियों में
भरे पड़े हैं किन्तु तीन चार रेखाओं में ही वे अपने पात्रों की स्मारेखा
स्पष्ट कर देते हैं । अपने पात्रों की विशेषताओं या चरित्र-गत दुर्बल-
ताओं का एक हल्का सा संकेत दे देते हैं । जैसे चित्रकार ब्रश के दो
तीन झटकों में रेखाचित्र खींच देता है, उसी प्रकार दो तीन रेखाओं
में ही वर्मा जी ने अपने स्कैच खींचे हैं । इन चित्रों में आखेट के चित्र
बड़े विस्तृत और स्पष्ट बन पड़े हैं । इनमें वर्णित जंगलों को देखकर
हम एक प्रकार से बुन्देलखण्ड की जैसे मर ही कर लेते हैं ।

शारीरिक चेष्टाओं की अभिव्यञ्जना

न केवल ऊपरी वर्णन, प्रत्युत पात्रों, जानवरों, या प्रकृति की
नाना वस्तुओं की चेष्टाओं के वर्णनों में वर्मा जी को बहुत सफलता
प्राप्त हुई है । उनके वर्णन गत्यात्मक (Dynamic) हैं । उनमें
गति है, प्राण है । वे चलते फिरते, लड़ते झगड़ते मरते गिरते हैं ।

क्रियाओं का बाहुल्य है। इन क्रियाओं, चेष्टाओं, अनुभवों के वर्णन में सजीवता और चित्रोपमता (Pictorial effects) है। कुछ शारीरिक चेष्टाओं की सजीवता देखिए—

‘अरे रे रे रे !!!’ लाखी ने हँसते हुये होठों पर दोनों हाथ रख लिये और आँखें मूँद लीं। उछल-उछल कर अट्टहास करते हुये निन्नी ने उसे कीचड़ से सान दिया।’

‘वे दोनों हँस पड़ी, दोनों के दाँत मोती जैसे, हँसी जैसे शब्द-कालीन नदी की निमल धारा। आँखों में अल्लहड़पन; अगो में थिरकन जैसे किसी राग की मरुची तान हो। धीमी भ्रम वाले कदल-पल्लवों पर से मृगनयनी की आँख लाखी के वस्त्रालंकारों पर गई—रेशम के वस्त्र, मोती और सोने के गहने। लाखी खिल रही थी।’

‘लाखी के नथने फल गये। श्वास प्रश्वास के पेंगों के बीच में छाती उठने गिरने लगी। गले की नसें उभर आईं। आँखों में आंसू आगये।’

हास्य एवं व्यंग्य का सम्मिश्रण

यों तो ‘मृगनयनी’ में शृंगर एवं वीर रसों का प्राधान्य है किन्तु यत्र तत्र हास्य एवं व्यंग्य का कलात्मक प्रयोग भी किया गया है। यह हास्य कहीं पात्रों के आकार, रहन सहन का ढंग, आदतें, स्वभाव इत्यादि के वर्णन में उत्पन्न किया है। उपन्यास का प्रारम्भिक अंश जिसमें हाँली की ठिठोली का वर्णन है, हास्य से परिपूर्ण है। एक दृश्य देखिए—

‘आओ, आओ, इसी की कमी रह गई है, सां पोते देती हूँ।’ निन्नी ने कहा—

लाखी सहमी नहीं। निन्नी से जा चिपटी। निन्नी ने लाखी के गोबर वाले हाथ को अपने एक हाथ की मुट्ठी में पकड़ लिया और

दूसरे से गोबर को छीनकर उसके साथे और एक गाल पर मल दिया ।

महमूद बघर्ग का वर्णन हास्य से परिपूर्ण है । उसकी आदतें, स्वभाव, बोलने का ढंग, भोजन करना ऐसी विचित्रताओं से परिपूर्ण है कि पाठक हँसे बिना नहीं रह सकता । उसे आश्चर्य होता है कि क्या ऐसा व्यक्ति का संसार में होना संभव है, जो कलेवा के अलावा दिन भर में गुजगती वजन का एक मन भोजन करता है ।

नसीरुद्दीन का जल विहार परिस्थिति जन्य हास्य का अच्छा उदाहरण है ! सम्पूर्ण दृश्य को इस ढंग से सजाया गया है कि पाठक पढ़ते पढ़ते नसीर की वामना लोलुपता, मूर्खतापूर्ण आदेशों, हरकतों और अविबेक पर हँसे बिना नहीं रह सकता । एक भाग देखिए:—

‘संगीत बन्द करके नसीर बोला, ‘पानी में कूद पड़ो और आपस में छुआ-छुआव्वल खेलो । मैं भी पानी में उतरूँगा ...’

आदेश—वाहिकाओं ने इस फरमान को अविलम्ब जारी किया । जो युवतियाँ तैरना जानती थीं, बे कपड़ों को उतार संभाल कर पानी में कूद पड़ीं । जो तैरना नहीं जानती थीं, बे घाट पर बैठे बैठे, पानी में कलोलें करती हुई तमाशा देखने लगीं । नसीरुद्दीन कभी इस समूह कभी उस समूह को बढ़ावा देने लगा ।

कुछ स्त्रियाँ तैरती खेलती भील में थोड़ी दूर निकल गईं । थक गईं, डूबने को हुईं और सहायता के लिये चिल्लाने लगीं । पास के समूह की कुछ उनको बचाने के लिए सरपटीं । थकी हुई स्त्रियाँ उनसे उलझकर अपने और उनके भी प्राणों को संकट में डालने की परिस्थिति में आ गईं ।

नसीरुद्दीन चिल्लाया,—बचाओ ! इनको बचाओ !!
अनेक कण्ठों से ये शब्द निकले ।

नसीर हाथ-पैर नचाने लगा, उछला, कूदा, लोकरन पानी में नहीं उतरा। मटरू ने उसमें भी अधिक उछल कूद को परन्तु कुछ नहीं।

कनात के पीछे सुल्तान के बहुत से नौकर खड़े थे। उनमें से कई जो तेराक थे, कनात को चीर कर दौड़ पड़े; पानी में कूदे और डूब-तियों को बचाकर किनारे ले आये। चाहते थे कि सुल्तान की दृष्टि उन पर पड़ जाय और पुरस्कार प्राप्त करें। सुल्तान की दृष्टि उन पर पड़ी। उसने उन लोगों को अपने निकट बुलाया—

‘तुम्हाग नाम ?’

उन लोगों ने अपने अपने नाम बतलाये :

‘तुम कनात के भीतर कैसे घुस आये ?’

उन लोगों की घिघी बँध गई।

‘किसने कहा था ? किस के हुक्म से आये ? बोलो !’

..... उनमें से एक बोला, ‘जहाँपनाह ने हुक्म दिया था कि इनको बचाओ।’

‘कमबख्तो ! तुमको हुक्म दिया था ?’ वह कड़का

नसीर ने आज्ञा दी; ‘इनका सिर धड़ से जुदा कर दो जिसकी आँखों ने यह सब देखा; और हाथ भी काट दो।’

ख्वासियो ने उन लोगों को केंद्र कर लिया। कनात के बाहर लेजाकर उनको मार दिया गया। फटे गले से नसीर बोला; ‘ख्वाजा मटरू सब मज्जा किरकिरा हो गया। कोई और शगल सोचो।’

ख्वाजा मटरू के हाँश कूँच कर चुके थे।

सरसता

वर्मा जी की शैली की सरसता और माधुर्य प्रेम और संयोग शृंगार के दृश्यों में विशेष रूप से प्रकट हुआ है। इस उपन्यास में प्रेम मय वार्त्तालापों में शृंगार रस फूट पड़ा है; पढ़कर पाठक को

मन ययूर नृत्य करने लगता है। अटल और लाखी; मानसिंह और निन्नी के प्रेम वर्णन में शृंगार रस का अच्छा निर्वाह हुआ है। एक सरस स्थल को देखिये —

‘मानसिंह भी बैठ गया। मृगनयनी मुसकराने लगी। मानसिंह की गम्भीरता चली गई। मानसिंह बोला, ‘तुम सचमुच बड़ी हो। मुझसे बड़ी और बहुत अच्छी।’

‘वाह ! वाह !!’

‘ठीक कहता हूँ।’

‘कैसे ?’

मानसिंह उसके निकट आने को हुआ। तो मृगनयनी और अधिक मुसकराई।

‘और निकट आए तो मैं बहुत छोटी रह जाऊँगी।’

.....

मानसिंह बोला, ‘तुम्हारी प्रत्येक मुसकान, भिन्न भिन्न समय पर तरह तरह का दिखलाई पड़ने वाला मलानापन, तुम्हारी छवि का हर एक अंश ऐसा मूर्त कर देना चाहता हूँ, इतना साकार कि जीवन के अन्त तक अपने प्रेम का अचल प्रतिबिम्ब बना रह कर दिखलाई पड़ता रहे’—पृष्ठ ३८७।

युद्धो तथा आखेटों के वर्णनों में वीर रस का अच्छा निर्वाह हुआ है। लाखी और निन्नी का आखेट मन में साहस, धैर्य और वीरता के भाव उत्पन्न करता है। मानसिंह के युद्ध कौशल, अटल का युद्ध तथा मृगनयनी की लड़ने की उद्दाम इच्छा वीर रस का संचार करते हैं। इन युद्धों के विस्तृत वर्णनों को पढ़कर ऐसा आनन्द आता है मानों पाठक स्वयं युद्ध में भाग ले रहा हो। सिकन्दर और मानसिंह के युद्ध का वर्णन (परिच्छेद ६६) बड़ा विस्तृत और सजीव है। शैली की स्पष्टता, वर्णन की अपूर्व शक्ति, कलात्मक सामर्थ्य और वीर भाव की अभिव्यक्ति बड़ी सफल है। इनके अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं।

अलंकार—

पात्रों के रूप गुण तथा मनोभावनाओं की प्रभावोत्पादक अभिव्यक्ति के लिये वर्मा जी ने अनेक अलंकारों का प्रयोग किया है। उपमाओं का सौन्दर्य देखने योग्य है। इन उपमाओं का प्रयोग इतनी कलात्मकता से किया गया है कि शैली में सरस प्रवाह और सरसता का संचार हो उठा है। अनेक कथापकथन बड़े चमत्कार पूर्ण हैं। कुछ वाक्य देखिए—

“..... गयासुद्दीन का गला भर आया और आंखें गीली हो गई, ख्वाजा ने समझ लिया कि सुराही की नियामत ने अपनी गांड़ी में समेट लिया है।”

‘इस कम्बख्त बरसात के लिए क्या कहा जाय ? यह लो, और तेजी से बरस पड़ा ! जैसे आसमान में छेद हो गये हों।’

‘अपने मन के सलोनपन के तकाजे से कैसे लड़ा जाय बे गरीब आप समझे ?’

‘इस कर्तव्य की सुधि ने मानसिंह की कला, कल्पना और ओज की ललित मधुरता को धक्का दिया, जैसे किसी ने मान मन्दिर और गूजरी महल के निर्माण को यकायक रोक दिया है, जैसे बैजू बावरे ने किसी मीठी तान को लेते लेते यकायक वीणा को पटक कर फोड़ डाला हो।’

‘मानसिंह के नेत्रों से आभा सी बिखर रही थी। वह आभा उन गीली आंखों में समा गई।’

वर्मा जी ने कुछ उपमाएँ बिल्कुल नवीन ढङ्ग की प्रयुक्त की हैं। इनमें हास्य व्यंग्य का पुट है। जैसे बघरंग से सम्बन्धित उपमाएँ लीजिये—

(१) बघरंग बोला, जैसे किसी नाले ने प्रवाह के जोर से बाँध का फोड़ डाला हो।

(२) बघरा बोला जैसे जमीन के नीचे से दरार में होकर भूकम्प बोला हो

(३) एक लम्बी डकार ली, जैसे बरसात में कोई कच्चा मकान गिरा हो ।

कुछ उत्प्रेक्षाओं के कलात्मक प्रयोग बड़े मर्मस्पर्शी बन पड़े हैं । इनसे मूल भाव के उद्दीपन में बड़ी सहायता मिलती है । कुछ उदाहरण देखिए—

(१) लाखी ने उठी हुई गदेली को हिलाकर बर्जित किया मानो रक्षा करने वाले नाग ने फन उठाया हो ।

(२) खेत में थोड़ी दूर नदी बह रही थी । उसके एक सिरे का पानी बहता हुआ दिग्वार्द दे रहा था । चन्द्रमा की रिपटती हुई चांदनी झिलमिल जान पड़ती थी मानो चाँदी की चादरो के आवरणों पर आवरणें चिलचिला रहे हों । सम्पूर्ण लहरों का समूह चांदी की उन चादरो का ओढ़ लेने की होंड़ सी लगा रहा था ।

अलंकारों के साथ मुहावरों का भी कलात्मक प्रयोग मिलता है, जिससे भाव-प्रकाशन तथा मानव-स्वभाव का प्रचुर ज्ञान हो जाता है । अलंकारों के प्रयोग में जहां मितव्ययता मिलती है, वहां वे भाव तथा परिस्थिति को भी स्पष्ट करने की अपूर्व क्षमता रखते हैं । नवीन उपमाएँ तथा सौन्दर्य विधान के उपयुक्त उत्प्रेक्षा अलंकारों का बड़ा मर्मस्पर्शी प्रयोग है ।

भाषा—

वर्मा जी की 'मृगनयनी' की भाषा सरल, स्पष्ट और सुबोध है । शब्द चयन में उदारता और भावाभिव्यक्ति में सहज स्वाभाविकता है । व्यर्थ की साहित्यिक जटिलता या संस्कृत गर्भित प्रयोगों से इन्हें अरुचि है । स्वाभाविक गति से वे कहानी कहते चलते हैं । फलतः उसमें पर्याप्त प्रवाह और अभिव्यक्ति को सामर्थ्य है ।

बुन्देलखण्डी वातावरण की मृष्टि के हेतु कहीं कहीं स्थानीय शब्दों का प्रयोग किया है। 'भीम, विसूरते, उवारी, गाह भ्यात, कचुल्ले, हुमुक, हडकम्प, हुलसा, भकुरने, अमल, राग' इत्यादि अनेक चलताऊ और ग्राम्य संसार में प्रयुक्त शब्दों का यत्र तत्र उपयोग हुआ है। इनसे भावाभिव्यक्ति में कोई अड़चन नहीं पड़ी है।

'मृगनयनी' में अनेक मुसलमान पात्र हैं। यथार्थवाद की दृष्टि से ये पात्र उर्दू फारसी मिश्रित चलती हिन्दी बोलते हैं। अपने पात्रों को स्वाभाविक भाषा देकर वर्मा जी ने उन्हें सजीवता प्रदान की है। मुसलमानों की भाषा में प्रचलित उर्दू शब्दों जैसे - बरदारत, जल-जले, शुमार, ताजी, पावन्द, उअ, बहिशत, खिलत, अमल, जशन, अर्ज, खुदावन्द, फितरत, ताईद, रंजिश—का भी प्रयोग किया गया है। साधारण पाठक भी इनका अर्थ समझ लेता है क्योंकि ये तत्सम रूप में ही प्रयुक्त हुये हैं।

साहित्यिक सरस स्थलों में शब्द संग्रह दर्शनीय है। शिक्षित वर्ग की भाषा में संस्कृत शब्दों का बाहुल्य है। स्वामाविकता की रक्षा के हेतु आपने शब्द-चयन को बदला है। संस्कृत शब्दों का प्रयोग अपेक्षाकृत कम है और तत्सम व तद्भव दोनों ही रूपों में हुआ है। ग्रामीणों की भाषा सरल, सीधी और बोधगम्य है। नगर और ग्राम के पात्रों की भाषा में पर्याप्त अन्तर है। भावाभिव्यंजन की शक्ति बढ़ाने के लिए सहयोगी शब्दों का काफी प्रयोग मिलता है। स्पष्टता सरसता और बोधगम्यता आपके विशेष गुण हैं। कहीं कहीं गानों का भी प्रयोग किया गया है, जिससे वातावरण निर्माण में सहायता मिली है।

देश काल वतावरण

इस उपन्यास में मध्यकालीन भारत की संघर्ष मय स्थिति का सजीव चित्र अंकित किया गया है। यों तो कथानक की घटनायें तथा

मूल पात्र ग्वालियर राज्य, नरवर, राई ग्राम इत्यादि से ही सम्बन्धित है, तथापि उपन्यासकार ने समग्र भारत की राजनैतिक, सामाजिक और धार्मिक स्थिति का इतिहास सम्मन्यथार्थ रूप में चित्रण किया है। उपन्यास के संसार में प्रविष्ट होते ही हमें मध्य युग का संघर्षमय सामन्ती वातावरण मिल जाता है, जिसमें मालवा का गयासुद्दीन, उसका पुत्र नसीरुद्दीन, दिल्ली का सिकन्दर लोदी, ग्वालियर का राजा मानसिंह तोमर तथा अन्य छोटे बड़े व्यक्ति राज्य-लिप्सा, या सौन्दर्य वासना लालुपता के कारण संघर्ष करते हुये मिलते हैं।

ऐतिहासिक स्थिति

उपन्यास की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के निर्माण में वर्मा जी सतत प्रयत्नशील रहे हैं। यत्र तत्र ऐसे अनेक वर्णन आये हैं, जिनके द्वारा वे पृष्ठभूमि की कड़ी जोड़ते, राजनैतिक स्थिति का स्मरण कराते दीखते हैं। रोमांटिक दृश्या के मध्य में एक एक ऐतिहासिक दृश्य आ जाता है, जिसमें पाठक निरन्तर होते हुए युद्धों, सेनाओं, राज्य वृद्धि के लिए परस्पर भगड़ते हुए सामन्तों का न भूल सके।

उपन्यास का प्रारम्भ ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से ही होता है। लेखक ने प्रारम्भ ही में ग्वालियर पर १५ वीं शताब्दी में होने वाले आक्रमणों बहलाल लादी तथा उसके उत्तराधिकारी सिकन्दर लादी के विफल प्रयासों एवं मानसिंह तोमर का निर्देश कर दिया है। सिकन्दर लादी के पश्चात् ग्वालियर की लौटती हुई समृद्धि तथा पश्चिम दक्षिण में लगभग छ. कोस की दूरी पर साँक नदी के किनारे राई नामक ग्राम का भी कुछ संकेत पाठकों को दे दिया गया है। इस राई ग्राम में तथा उसके समीप के जंगलों में ही आधा उपन्यास चलता रहता है। कहीं यह वर्णन विस्तृत होकर पाठकों को उबा न दे, इसलिए अति संक्षेप में यह स्मरण करा दिया गया है।

स्थानीय इतिहास के अतिरिक्त समग्र भारत की राजनैतिक अवस्था एवं अशान्त वातावरण का भी चित्रण करा दिया गया है।

जिससे पाठक पात्र की परिस्थिति पर एक विहंगम दृष्टि डाल सके।

‘मृगनयनी’ में लेखक का सन्देश

ऐतिहासिक उपन्यास में लेखक का क्षेत्र सीमित रहता है। फिर भी अप्रत्यक्ष रूप से वह अपना सन्देश किसी पात्र के माध्यम द्वारा अभिव्यक्त कर देता है। चर्मा जी ने जीवन धर्म तथा समाज के विषय में जो सन्देश प्रकट किये हैं, वे इस प्रकार हैं—

१—कर्म मार्ग का पथ—

हम व्यर्थ के मत मतान्तर, तर्क तथा उलझी समस्याओं में संघर्ष करने के स्थान पर अपना कार्य करते जाय, कर्त्तव्य में विमुख न हों। सिद्धान्तवाद के कट्टर अनुयायी बनना भूखता है। कर्मवाद का संदेश राजा मानसिंह और विजयजंगम पण्डित दोनों देते हैं। विजयजंगम के कुछ सिद्धान्त वाक्य देखिये—

‘जीवन में काम करना, श्रम से रोटी का उपार्जन करना और शिव का नाम लेना, यही गौरव है। इसी में जीवन की सार्थकता है।’

‘जीवन में कार्यात्मक काम ही सब कुछ है। एक काम से मन उचटे तो दूसरा करने लगे—मैं तो अवकाश इसी को कहता हूँ।’

काम ही सब कुछ है। काम करना ही मानव का धर्म है। काम करते करते ही मनुष्य स्वर्ग लोक की प्राप्ति कर सकता है।’

राजा मानसिंह कहते हैं, ‘यें बैठे ठाले के वाक् युद्ध व्यर्थ हैं। कर्म मुख्य है। जो इससे बचना चाहते हैं, वे ही दांयें बांयें पगडण्डियां ढूँढ़ते हैं... मैं शास्त्री हूँ न पण्डित। केवल इतना कह सकता हूँ कि लड़िये मती कुछ काम करियें और आगे की तैयारी में लगिये...।’

२—प्राचीन कट्टर रूढ़िवादिता एवं जाति-पात की सकुचितता का विरोध—

बोधन की कट्टर एवं रूढ़िवादिता तथा विजय की उदारता दिखवा कर वर्मा जी ने रूढ़िवादिता का खंडन किया है। मानसिंह भी जाति बन्धन और रूढ़िवाद का निरन्तर विरोध करता है और लाखी और अटल का विवाह कराता है। मृगनयनी पर्दा प्रथा को तोड़ती है। मानसिंह के ये वचन देखिये—

‘जनक, महावीर, गौतम बुद्ध कौन थे ? शास्त्री सोचो, इस-प्रकार का कट्टर वर्णाश्रम हिन्दुओं को कितनी रक्षा कर सका है ? रक्षा के लिये ढाल और तलवार दोनों अनिवार्य रूप से आवश्यक हैं। जाति-पात ढाल का काम तो कर सकी है, और कर रही है, परन्तु तलवार का काम न तो हाल के युग में उसने कर पाया है, और न कभी कर पायेगी।’

बेचारी लाखी जाति-पात की कट्टरता की शिकार अन्त तक बनी रहती है। मरते मरते तक वह हिन्दू धर्म के इस कलंक को नहीं भूल पाती। वह अन्त में अटल से व्यंग्य करते हुए कहती है—

‘व्याह कर लेना अपनी जाति-पात में ।’ अन्त तक उसे जाति-पात को कट्टरता का भूत नहा छाड़ता।

‘मृगनयनी’ के परिचय में स्वयं वर्मा जी ने इस समस्या का आर संकेत किया है—

‘जात पात ने भारत में रक्षात्मक कार्य भी किया है और आज भी शायद कुछ कर रही है, परन्तु इसका विनाशात्मक काम भी कुछ कम नहीं हुआ ।’ इससे प्रकट होता है कि जाति-पात की संकुचितता को उन्होंने जानबूझ कर रखा है।

३—संयम और कर्तव्य का महत्त्व—

मानव जीवन का सुख नियम संयम पर निर्भर है। संयम से ही सौंदर्य और स्वास्थ्य निखरता है; शक्ति आती है। प्रेम स्थिर रहता

है। मनुष्य का प्रेमी-प्रेमिका के प्रति सतत आकर्षण बना रहता है। प्राचीन भारतीय संस्कृति में संयम वाले प्रेम की ही महत्ता को स्वीकार किया गया है। इसी का प्रतिपादन बर्मा जी ने 'मृगनयनी' में किया है। उनकी पात्रियों का प्रेम प्रेमियों को कर्तव्य मार्ग पर आगे बढ़ाता है, नवीन प्रेरणा देता है। वामना के पंक में नहीं फंमता। मानसिंह मृगनयनी से उसकी प्रेरणा के विषय में कहता है—

‘तुम संयम में प्रेम को अचल बनाती हो और मैं अपने विकार में उसे चंचल कर देता हूँ। संयम के आधार वाला प्रेम ही आगे भी टिके रहने की क्षमता रखता है।’

.....

मृगनयनी कहती है, ‘संकल्प और भावना जीवन के तखड़ी के दो पलड़े हैं। जिसको अधिक भार से लाद दीजिए, वहीं नीचे चला जायगा। संकल्प कर्तव्य है और भावना कला। दोनों के समान समन्वय की आवश्यकता है।’

दबे हुए स्वर में मानसिंह बोला, ‘कर्तव्य वाले अंग में अब कौन सी कसर रह गई है, देवि !’

माँतियों की माला और सम्पूर्ण चित्र पर दृष्टि घुमाती हुई मृगनयनी ने कर्तव्य वाले अंश पर उगली रख कर कहा, ‘प्रजा के सुख की, देश की स्वाधीनता की।’

मानसिंह ने काँपते हुए होठों से धीमे धीमे शब्द निकले—कला और कर्तव्य का समन्वय इस कसर को किसी दिन अवश्य पूरा करेगा।’

४ - सच्चा और निष्ठावान् प्रेम—

राजा मानसिंह और मृगनयनी; लाखी और अटल का निष्ठावान् प्रेम चित्रित कर बर्मा जी ने नए आदर्श हमारे सामने उपस्थित किए हैं। लाखी अटल का पवित्र प्रेम व्यवहारिक है। मृगनयनी प्रेम में राजा को मदहोश न कर प्रेरक शक्ति का कार्य करता है। वह कहती है

‘वीणा को बजाते बजाते, काम पड़ने पर यदि तुरन्त तलवार न उठा पाई, कोमल मेज पर मोते मोते संकट आने पर यदि तुरन्त ही उछल कर कमर न कमी, ध्रुवपद को गाते गाते शत्रु के सामने आ खड़े होने पर यदि तुरन्त गरज कर चिन्तौती न दे पाई ’ तो ऐसी वीणा मेज और ध्रुवपद की तानों का काम ही क्या ?’

५—आदर्श शामक—

राजा मानसिंह के रूप में एक वीर साहसी आदर्श प्रेमी और कला साधक का नमूना उपस्थित किया गया है। वह युद्ध कला और सैन्य संचालन के साथ प्रजा वत्सलता के गुण से परिपूर्ण है। वह भोपड़ी में जाकर गरीब मजदूर की सहायता करता है। मजदूर के ये शब्द देखिए—‘सुना था कि महाराज ब्राह्मणों, पण्डितों और सेठों के हैं, आज जाना कि वे मजदूर और किसानों के भी हैं।’

६—कला जीवन के लिए—

वर्मा जी की कला उपयोगिता इस बात में मानते हैं कि वह जीवन को प्रेरित करें, मनुष्य को कुछ नया संदेश देकर आगे बढ़ाए कुछ प्रकाश दें। कर्तव्य को भुलाकर निरे सौन्दर्य या वासना को उकसाने वाली कला-साधना में उन्हें विश्वास नहीं। कई पात्रों के मुख से लेखक ने कला और कर्तव्य का यह समन्वय चित्रित किया है। राजा मानसिंह के ये वचन देखिए:—

‘कला का अनुशीलन और कर्तव्य का पालन साथ साथ चल सकते हैं। मैं सेना को भी सजाऊँगा और ललित कलाओं की भी उन्नति करूँगा।’

वह कला क्या जो कर्तव्य को लंगड़ा कर दे और वह कर्तव्य क्या जो कला का अंगभंग हो जाने दे।’

परोक्ष रूप में वर्मा जी ने चित्रित किया है कि कला, सुरुचि एवं कर्तव्य पालन में संतुलन होना चाहिए।

७-नारी प्रेरक शक्ति के रूप में—

वर्मा जी के नारी पात्र प्रेमियों को उत्तेजित कर कर्तव्य-पथ पर आरुढ़ करते हैं। उन्होंने स्त्री गौरव, सौन्दर्य पवित्रता और साम्प्रतिक महत्त्व का सुचारु चित्रण किया है। भ्रष्टा पिल्ली स्वयं अपनी आचार हीनता का दण्ड पाती है। लाखी निन्नी इत्यादि सतत संघर्ष शील बनी रहती हैं। भोग विलास से नारी का सौन्दर्य नष्ट होता है, स्वास्थ्य गिर जाता है और वे निकम्मी हो जाती हैं—ये भाव यत्र-तत्र उपन्यास में अभिव्यक्त हुए हैं। लेखक के संदेश से पूर्ण कुछ स्थल देखिए—

‘नियम संयम में रहिए और मुझे भी रहने दीजिए। मैं चाहती हूँ कि उन गुणों के साथ मेरी देह में भी वही बल बना रहे, जिसको राई से लेकर आई हूँ।’

‘पहले के मातियों ने आग और चिंता को जितना प्यार किया, उसके बराबर तीर और तलवार के साथ भी करना चाहिये था।’

“छोड़िये मुझको, “—मृगनयनी ने कहा, “क्षत्रिय के लिये इस समय जो उचित है, उसी को करने में जुटजाइये। रक्तवास की रक्षा की चिन्ता को दूर कीजिए—मैं उसकी रक्षा का प्रबन्ध करूंगी,

८—फैशन का विरोध—

आज के फैशन, मिथ्या प्रदर्शन के वर्मा जी विरुद्ध हैं। वे चाहते हैं कि भारतीय नारी का शील गुण सम्पन्न व्यक्तित्व ही विकसित हो। वे पतली दुबली न बनकर मजबूत शक्तिशाली चरित्रवान बनें। नट जब भड़कीले वस्त्रों का प्रलोभन देते हैं, तो निन्नी का यह उत्तर कितना भव्य है। देखिये—

‘तो क्या नटिनी बन जावे ? डोंग डूँ में ये जो तितलियाँ उड़ रहीं हैं । क्या बैसी बनावट बना लें ।’

विचार, उद्देश्य एवं कला की दृष्टियों से वर्मा जी की ‘मृगनयनी’ एक श्रेष्ठ ऐतिहासिक रुमानी उपन्यास है । इसमें वर्माजी जी की उपन्यास-कला का पूर्ण विकास हुआ है । कथानक की रोचकता, युद्ध एवं आखेटों की सजीवता और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की सूक्ष्मता में, मृगनयनी, अतीव सुन्दर रचना है ।

वे युद्ध विद्या और राजनीति में परांगत थीं ।

गंगाधर राव—

गंगाधरराव साहित्य और ललित कलाओं के पूरे रसिक थे । गायक, वादक, वीणा और पखावज के उस्ताद और रीतिकाल तथा भक्तिरस की आँट वाले कवि गंगाधर राव की महफिज को आबाद करते थे । उन्होंने दूर दूर से नाना प्रकार के हस्त लिखित ग्रन्थ एकत्रित कराये और विशाल पुस्तक भण्डार में अपने पुस्तकालय को परिपूर्ण कर दिया नाटकों का इन्हें विशेष शौक था, वे संस्कृत नाटकों का हिन्दी और मराठी में अनुवाद कराया करते थे । उनका अभिनय भी कराया करते थे और स्वयं अभिनय भी करते थे । यदि पुरुष के अभिनय में सन्तोष न होता था, तो स्त्री की भूमिका में भी आ जाते थे ।

स्वभाव के क्रोधी एवं विलासी थे । अपराधियों को कठोर दण्ड देते थे । गंगाधर राव का क्रोध चढ़ जाने पर उतरना मुश्किल से था । जाति और धर्म के मामले में एक बार भगड़ा होने पर उन्होंने अपराधी के गले में तार का गम जनेऊ डालवाने का दण्ड दिया था ।

विवाह होने के पश्चात् गंगाधर को शासन का अधिकार प्राप्त हो गया । उन्हें यह मानना पड़ा कि भोंसी में एक अंग्रेजी फौज रखी जायगी, वयय भोंसी राज्य को देना होगा । उन्होंने नकद खर्चा न देकर कम्पनी सरकार का आग्रह निभाने के लिये भोंसी के राज्य से २ लाख २७ हजार चार सौ अठ्ठावन रुपये वार्षिक आय का एक इलाका उन्हें दे दिया । खुशियाँ मनाई गई, परन्तु अनेक भोंसी निवासियों को उनसे खोखलापन ही दिखाई दिया । स्वयं राजा को नाटकशाला में यथेष्ट मनोरंजन प्राप्त न हो सका ।

वे हिन्दुस्तानियों की निर्बलताओं को समझते थे । उन्होंने

एक बार कहा था, “हमारे यहाँ फूट है। गाँव-गाँव में उपद्रवी, डाकू और बटमार भरे हुए हैं। अङ्गरेजों के पास हथियार अच्छे हैं। इसलिये उन्होंने राज्य कायम कर लिया है।”

उनका दाम्पत्य जीवन साधारणतः सुखी रहा। लक्ष्मीबाई के मन्तव्यों पर वे ध्यान देते रहे। दोनों १८५० में प्रयाग, काशी, गया इत्यादि की यात्रा के लिये गये थे। पुत्र होने के पश्चात् उनके स्वभाव में कुछ मृदुलता आ गई थी। रानी के मत को वे आदर की दृष्टि से देखते थे। साधारणतः उन्हें मंत्रियों की स्वाधीनता सहन न थी।

उनमें आत्म सम्मान और राष्ट्रीयता की भावनाएं भी थीं। गार्डन की बातें सुनकर उनका देशाभिमान जाग्रत हो गया था। वे अनुशासन पसन्द करते थे। गार्डन और गंगाधर राव का यह कथोपकथन देखिये :—

राज को एक व्यंग्य सूझा। बोले, “इन कानून जाबते के द्वारा आपके इलाकों में जनता को न्याय कितने समय में मिल जाता है?”

गार्डन—“अपराध वाले मामले में दो एक महीने लग जाते हैं और दीवानी मामलों में एकाध साल।”

राजा फिर हमें, कहा—“हमारे यहाँ तो तुरन्त न्याय होता है। मैं तो दो एक दिन से ज्यादा नहीं लगाता। दीवानी और अपराधी मामलों का कोई भेद नहीं करता। पंचायतों के निर्णय को सर्वमान्य मानता हूँ। गफलत करने वाली पुलिस से चोरी का नुकसान भरवाता हूँ। जनता पर मेरी धाक होनी चाहिए, न कि मेरे अफसरों की। वह राज्य भी बहुत समय तक नहीं टिक सकता जो कर्मचारियों और पुलिस की धाक पर आश्रित हो। मैं तो अपने अपराधी कर्मचारियों को लांछे की मछली के कांडे से पीटता हूँ। अशिष्टता को दण्डित करने में भी मैं नहीं चूकता।

सत्तेप में, गंगाधर राव पहले एक दुर्बल, विलासी, कलाप्रेमी शासक थे, शृङ्गार रस की कविता के प्रेमी थे और कठोरता से शासन करते

।। इतने पर भी उनमें देशाभिमान था। कट्टर पथियों में वे प्रायः जाक उड़ाया करते थे। अन्तर्द्वन्द्व के कारण उनके मन में क्रोध की मात्रा बढ़ गई थी और अपराधियों का दण्ड देने के वे नए नए साधन काम में लाया करते थे। खुदाबक्श के आ जाने पर उन्होंने गहरी को कैद में डलवा दिया था। और उसे बिच्छू से कटवाने की नज़ा दी थी। उन्होंने एक विशेष वर्ग के अपराधियों को बिच्छू से कटवाने का विधान कर रखा था। कट्टे में पैर का डालना भाँजना एक साधारण सी बात थी। गहन अपराधों में हाथ पाँव कटवा डालने की प्रथा जारी थी।

तात्या टोपे —

बाजीराव ने वाला गुरु के अखाड़े वाले तात्या को भाँसी में मोरोपन्त के लिए निवास स्थान इत्यादि की उचित व्यवस्था के लिए उन लोगों के साथ भेजा। यह तात्या ब्राह्मण था। आगे चल कर यही युवा तात्या टोपे के नाम से प्रसिद्ध हुआ। टोपे को बिठूर की अपेक्षा भाँसी अधिक पसन्द आई। उसकी कल्पना गंगाधर राव की नाटक शाला में बार बार उलझ जाती थी। भाँसी का रहन सहन, स्त्री पुरुष और वहाँ की प्राकृतिक वातावरण उसको गङ्गा तट से अधिक मनोहर लगे। तात्या वीर सैनिक था। फौजी पोशाक में सिर पर लोहे की फिरौंसिसी टोपी पहनता था। इस कारण गंगाधर राव ने इसे 'टोपे' के नाम से सम्बोधन करना आरंभ कर दिया था।

तात्या को रानी लक्ष्मीबाई के नेतृत्व में किए गए स्वाधीनता आन्दोलन से पूर्ण सहानुभूति थी। वह एक सेनापति जैसा कार्य रानी की आधीनता में करता रहा। रानी की आज्ञा पालन करना उसका प्रिय धर्म बन गया। वह राजनीति की चालें खूब समझता था और गुप्त योजनाओं को किसी पर प्रकट नहीं होने देता था। वह विश्वस्त दूत का भी कार्य कर सकता था। उसे रानी के विवेक

एवं तेज में पूरा भरोसा था ।

रानी और तात्या के वार्त्तालाप का एक अंश देखिये, जिससे तात्या की उत्कट देश भक्ति, रानी में अटल विश्वास, बुद्धि और विवेक प्रकट होते हैं :—

तात्या बोला—“आप बिठूर में छत्रपति और बाजीराव और छत्रसाल, न जाने कितनों का नाम लिया करती थीं ।”

रानी—ये नाम मैं कैसे भूलूंगी” छत्रसाल का नाम अब भी मन्त्र का सा काम करता है ।

तात्या—ये मन्त्र कब काम आवेंगे ?

रानी जग मुस्कराई । तात्या उनकी मुस्कराहट को पहि-
चानता था—“उसने आशा से कान लगाये ।

रानी ने कहा—टापे अभी समय नहीं आया है । ममर्थ रामदास का दिया हुआ स्वराज्य सन्देश, छत्रपति शिवाजी का पाला हुआ वह आदर्श, छत्रसाल का वह अनुशीलन अमर और अक्षय है ।

तात्या अधीर होकर बोला—महारानी साहब, ये बातें कान और हृदय को अच्छी मालूम होती हैं, पर हिन्दू और मुसलमान जनता तो अचेत सी जान पड़ती है—” ।

रानी ने प्रश्न किया—दिल्ली का क्या हाल है ?

तात्या—“बादशाह का ? उन विचारों को नब्बे हजार रुपया साल पेन्शन मिलती है । कविता करते हैं और कवि सम्मेलनों में उलझे रहते हैं । कम्पनी ने उनको नजर भेंट बन्द कर दी है और उनसे कह रहा है कि अपने को बादशाह कहना छोड़ो, नहीं तो पेंशन बन्द कर देंगे ।”

उपरोक्त उदाहरण से तात्या की जागरूकता, राजनीति का ज्ञान, तर्क शक्ति, विवेक और प्रगतिशीलता स्पष्ट हो जाती है । वह बिलासिता को घृणा करता है; स्वधर्म एवं कर्त्तव्य पालन को महत्ता

प्रदान करता है। वह सैनिक प्रवृत्ति का व्यक्ति है उसका प्रेम भी राजनीति में पगा हुआ है। नत्त की जुही की ओर वह आकृष्ट हुआ किन्तु अपने का सम्हाले रहा। वह नारी प्रकृति को न समझने की अनभिज्ञता स्वीकार करता है। वह काम से काम रखता है, व्यर्थ के रोमांटिक भ्रमों में नहीं फसता जब फौज के सिपाही बदला निकालने का व्यग्र हो जाते हैं, तो वह निम्न शब्दों में उनका विवेक जाग्रत करता है:—

तात्पर्य— (मोती बाई से)—“अभी मरने मारने का समय नहीं आया है। मैं चाहता हूँ कि प्रत्येक पलटन में से तीन अफसर जो बिल्कुल विश्वासके योग्य हों, चुन लिये जावें” उनमें कह दिया जावे कि वे ईसाई तो होंगे ही नहीं, पर इस समय अपना सस्त्र न खा बैठें क्रोध भरे रहें, परन्तु उसका निकलने किसी प्रकार भी न दें, नहीं तो सब किया कगया भिट्टी में मिल जावेगा। अब की बार आऊंगा, तब जो कुछ करना है, उसकी तारीख और समय बतला जाऊंगा।

उसके स्वभाव में कुछ दुर्बलताएँ भी थीं जैसे—अनुशासन की अस्त व्यस्तता, रूखापन, शुष्कता, प्रेम में राजनीति का आधिक्य। वह एक वीर सैनिक है, स्वदेश के प्रेम से परिपूर्ण है। रण-पंडित है। एक सिपाही के उच्चतम गुण उसमें देखे जा सकते हैं। देश की बलिबेदी पर मर मिटने की उसमें साधना है।

गौण पात्र

१—पीर अली:—

कुटिल चरित्र का मुसलमान पात्र है। अली बहादुर का मित्र बना रह कर यह षडयंत्र में हिस्सा लेता रहा और भौंसी के पतन में एक बड़ा कारण बना। यह उपन्यास में विश्वासघातक खल नायक का पार्ट करता है। इसके चरित्र में अकृतज्ञता, विश्वासघात, ‘बगल में छुरी मुंह में राम राम’ उक्ति को चरितार्थ करने वाला, कुटिल जासूस। ऊपरी मन से अपने आपको महारानी का शुभ चिन्तक

बतलाता रहा। खेद है कि राजनैतिज्ञ रानी उसको गहराई से परख न सकी। विजय के हर्ष में वे अपने हितचिंतक पर सन्देह करना ईश्वर के प्रति कृतज्ञता की मात्रा को कम करना समझती रहीं। इसलिए गीरअली शाघ्र विरवान पात्र लोगों को गिनती में मान लिया गया।

जब अंग्रेजों की सेना आई, पीरअली जासूस बन कर अंग्रेजी सेना की गोपनीय बातें मालूम करने गया किन्तु किसें मालूम था कि यह विश्वासघात करने जा रहा है। वहाँ जा कर उसने जनरल रोज को भौंसी की सब गुप्त बातें कह सुनाई। वापस आकर झूठ मूठ बातें इधर भी कहता रहा। पीरअली ही भौंसी के पतन का कारण बना। वह कपटी, दुष्ट, कुटिल विश्वासघातक, देश-द्रोही और धूर्त था।

२—सागरसिंह डाकू:—

निर्धनों को आर्थिक सहायता प्रदान करने वाला तगड़ा फुर्तीला व्यक्ति, आँखें तीक्ष्ण और चमकदार, दाढ़ी कानों पर चढ़ी हुई—यह है सागर का चित्र। वह रावली के बरुआसागर से कुछ दूर का रहने वाला था। परिवार प्रतिष्ठित सैनिकों का था। काम न मिलने पर डाकू बन गया था। रानी के सामने सागरसिंह अपने वश के विषय में कहता है—

“हमारा वश सदा लड़ाइयों में भाग लेता रहा है। महाराज ओरछा की सेवा में लड़ा। महाराज छत्रशाल की सेवा में रह कर युद्ध किये। जब अंग्रेज आये, तब उनकी आधीनता, जिन ठाकुरों ने स्वीकार नहीं की, उनमें हम लोग भी थे। हमको जब दबाया गया, हम लोग बिगड़ खड़े हुए और डाके डालने लगे। मैं अपने लिए तथा अपने साथियों के लिए कह सकता हूँ कि हमने स्त्रियों और दीन दरिद्रों को कभी नहीं सताया।”

सागरसिंह झूठ नहीं बोलता, वचन का पक्का रहता है और

वामी भक्ति रहता है। वह अपने साथियों समेत भौंसी की सेना में भरती हो जाता है। युद्ध में वह रानी का सहायक रहता है। समय आने पर वह अपने प्राणों की भी परवाह नहीं करता। उसकी सेवा और रानी के प्रति श्रद्धापूर्ण भक्ति उसे हमारी दृष्टि में बहुत ऊँचा उठा देती है। वह डाकू से जनरल बना और खण्डेगव फाटक की रक्षा में मर कर अनन्त गौरव पा गया। रानी ने कहा था, जिस देश में सागरसिंह सरीखे लोग जन्म लेते हैं, वह स्वराज्य से बहुत दिनों वंचित नहीं रह सकता। ये शब्द उनके चरित्र का सही चित्र है।

३—नवाब अली बहादुर—

नवाब अलीबहादुर देश द्रोही, स्वार्थी, लालची, खुशामद व्यक्ति है। यह अंग्रेजों से मिला हुआ है और अपना उल्लू सीधा कर रहा है वह रत्ती रत्ती भर बातें गुप्त रूप से गवर्नर जनरल साहब को पहुँचाता है। वह रानी के खिलाफ होने वाले व्यक्तियों को मड़काता है और चुल्चाप उन्हें अंग्रेजों के साथ मिलाना चाहता है। उसी की प्रेरणा से दीवान नत्थे खॉ भौंसी पर आक्रमण करता है। पीरअली उसके षडयन्त्र में शामिल है। अलीबहादुर की भौंसी ने पुरानी शत्रुता चली आती थी। उसे अपना स्थान छोड़ना पड़ा था। इसलिए उसके मन में भौंसी के राजा के प्रति शोभ और भी घन हो गया।

अलीबहादुर की चिट्ठी जबलपुर भेज दी गई, नत्थे खॉ ने तैयारी शुरू करदी। अलीबहादुर को बड़ी खुशी हुई। युद्ध में नत्थे खॉ की पराजय हुई। अलीबहादुर ने समझ लिया कि सब गया। बच निकलने का प्रयत्न किया जिसमें पीरअली की सहायता से वह उफल हुआ। अलीबहादुर एक ऐसा दुश्चरित्र व्यक्ति है, जिससे कोई भी देश या जाति कलंकित होती है। ऐसे व्यक्तियों को निन्दा मूणा और तिरस्कार के अतिरिक्त समाज क्या दे सकता है।

४ कप्तान गार्डेन—

भौंसी स्थित अंग्रेजी सेना का अफसर था। साहित्यिक, व्यापार कुशल, स्वदेश प्रेमी और भारतवर्ष को घृणा या अवहेलना की दृष्टि से देखने वाला ! परन्तु भारत के राजाओं के सहलाने कुसलाने की क्रिया का अभ्यासी, अपने कर्तव्य पालन में दृढ़। हिन्दी उसने सीख ली थी। वह राजा गंगाधर राव के पास भी कभी-कभी आया करता था।

५—खुदाबख्शः—

ईमानदार एवं धर्म भोर मुसलमान राजा गङ्गाधरराव के दरबार में रहते हैं। एक दिन मातीबाई को रंगमंच पर देखकर उसके मुँह से यकायक “वाह !” निकल पड़ा। मातीबाई ने खुदाबख्श की ओर आँखें गढ़ाई। जब जब मातीबाई रंगमंच पर जिस जिस दृश्य में आई, उसने दर्शकों पर से दृष्टि को समेट कर खुदाबख्श पर केन्द्रित किया। राजा को यह बात बुरी लगी। दूसरे दिन खुदाबख्श को राज दरबार से अलग कर दिया गया और घोषणा करवाई कि यदि वे फिर भौंसी में दिखाई पड़े तो उसके नंगे शरीर पर कोड़े लगाये जायेंगे। मातीबाई की प्रेरणा से वह जीवन भर देश की सेवा करता रहा मानवता और देश प्रेम से उसका चारेत्र परिपूर्ण है।

६—गुल मुहम्मदः—

देश भक्ति एवं राज भक्ति में गुल मुहम्मद एक आदर्श मुसलमान पठान है। वह बाहर से आये हुये पठानों का सरदार है। उसका आदर्श निम्न शब्दों से प्रकट होता हैः—

“हज़ूर अमन बहुत समझता है और न बहुत सुनता है। सिर्फ इतना अरज है कि अम लांग भौंसी की मिट्टी में मिलेगा और बहिश्त लेगा। सोराज की आप जानो।”

पृष्ठ २६६

वह वीर, साहसी, युद्ध विद्या में निपुण लाल कुर्ती दल का

नेता है। लड़ने से कभी भयभीत नहीं होता। रानी लक्ष्मीबाई की रक्षा के निमित्त अन्तिम दम तक उनके साथ रहता है और सदा सर्वदा उनका आज्ञा पालन करता है। अन्तिम समय में जब रानी अकेली रह गई थीं, उसने तीन व्यक्तियों को अकेले मार डाला था, अन्य मैदान छोड़ कर भाग गये थे। जब रानी घायल होकर गिरी तो दिन भर के थके मोंदें, भूखे प्यासे, धून और खून में सने हुए गुलमुहम्मद ने पश्चिम की ओर मुँह फेर कर कहा—“खुदा, पाक परवर दिगार, रहम रहम !” उस कठर पठान की आँखें आँसुओं को मानों बरसने लगीं और वह बच्चों की तरह हिलक हिलक कर रोने लगा। दाह संस्कार करने के पश्चात् गुलमुहम्मद ने गधुनाथ सिंह से कहा,

“दीवान साहब ! अम कहाँ जायगा ? अम राहतगढ़ में जब चला तब पाँच सौ पठान था। अब एक रह गया। अकेला कहाँ जायगा। अम भी मारेगा और मरेगा। बाई अम को मत हठाओ।”

फिर रानी की पवित्र हड्डियों की रक्षा के लिए उसे गोंक लिया गया। वह फकीर हो गया। जब चिता के स्थान पर कुछ हड्डियाँ शेष रह गईं तो उसका हृदय द्रवित हो गया। वह बोला, ‘ओ; कबी नहीं। वो मरा नहीं। वो कबी नहीं मरेगा। वो मुर्दों को जान बख्शता रहेगा।’ जब उसमें रानी की समाधि के बारे में पूछा गया, कि यह किसका मजार है, तो उसने उत्तर दिया “अमारे पीर का. वो वौत बड़ा बली था।”

गुलमुहम्मद देश प्रेमी, राजभक्त रानी का अनुशासन मानने वाला, दृढ़ चरित्र, सच्चा सैनिक था। उसने रानी के अन्तिम क्षण तक उनका साथ दिया। वह उपन्यास का एक आदर्श चरित्र है। शुष्क पठान होते हुए भी उसके हृदय में करुणा, प्रेम और सहा-नुभूति विद्यमान है।

७—बरहानुद्दीन—

गुलमुहम्मद की तरह, बरहानुद्दीन भी आदर्श स्वामी भक्त वीर, साहसी बुन्देलखण्डी पठान है। वह अपने कर्त्तव्य में दृढ़ विश्वासी और प्रण को पूरा करने वाला। उसे जो हुक्म दिया जाता है, पूर्णरूप से पालन करता है। पीर अली को जल्दी ही मालूम हो जाता है कि बरहानुद्दीन अतुर है। वह कभी न कभी उसे पकड़ लेगा। अन्त में बरहानुद्दीन को शक हो ही जाता है। एक दिन वह चुपचाप पीर अली के पीछे चल देता है और उसे गुप्त प्रणयंत्र का ज्ञान हो जाता है। वह बताता है तो उस पर अविश्वास किया जाता है और उसे स्तीफा देना पड़ता है। जाते-जाते वह पीर अली और दूल्हाजू से सतर्क कर जाता है। जब देश द्रोही दूल्हाजू फाटक खोल देता है, तो बरहानुद्दीन की सच्चाई खुलती है।

अपनी मृत्यु से पूर्व वह अपनी देश-भक्ति का सच्चा परिचय देता है। अकेले कई गोरों को तलवार के घाट उतारता है किन्तु यकायक उस पर कई वार हो जाते हैं और वह गिर पड़ता है। रानी ने पास जाकर देखा, यह मिपाही बरहानुद्दीन था। बरहाय ने पहिचान लिया। उसने आँखें फाड़ी पूरा बल लगाया, लेकिन कठिनाई से बोल पाया, “हजूर माफी” मुश्किल से रानी के मुँह से निकलता है “तुम सच्चे सिपाही हो।”

वास्तव में वह सच्चा, स्वामी भक्त स्वदेश प्रेमी है। उसमें बचन की सत्यता - वीरता, और सच्ची बात कटु ही क्यों न हो, कह देने की तत्कन है। रानी उसकी वीरता और स्वदेश भक्ति से बहुत प्रभावित हुई और उसी स्थान पर कब्र बनाने का हुक्म दिया। बरहानुद्दीन सच्चा मिपाही, आदर्श सैनिक, देशभक्त मुसलमान था।

८—दीवान दूल्हाजू:—

प्रारम्भ में दीवान दूल्हाजू रानी का विश्वास पात्र था, किन्तु सुन्दर से प्रेम-भिक्ता में निराश होकर वह नाराज होगया और गाढ़ी

पर उतर आया। पीरअली के साथ मिलकर वह जनरल रोज के पास पहुंचा और गंगाजी की सौगन्ध खाकर अंग्रेजों का साथी और रानी का शत्रु बन गया। उसने फाटक खोल दिये और शत्रु को अन्दर घुमा लिया। वह एक दुर्बल चरित्र का व्यक्ति है।

६---रघुनाथसिंह---

धीर, वीर. रघुनाथसिंह रानी का विश्वास पात्र सैनिक है। अन्त तक वीरता पूर्वक सेना का संचालन करता और रानी की सहायता में तत्पर रहता है। वह मुन्दर के प्रति आकृष्ट होता है। उसका प्रेम पवित्र उज्ज्वल और आदर्श प्रेम है। वह अपने प्रेमिका मुन्दर के लिये मर मिटने को तैयार है। एक दृश्य देखिये दोनों प्रेमियों का प्रेम कितना मर्मस्पर्शी बन पड़ा है—

“बुर्ज की मुड़ेर पर एक गोला आकर टकराया।

मुन्दर ने कहा—“यदि यह गोला मुझे लग जाता, तो मैं न बचती। आप मेरे शव को जला देने न ?”

रघुनाथसिंह जरा तीव्र स्वर में बोला, “और मुझको लग जाता तो आप मुझको दो लकड़ी दे दीं या नहीं ?”

मुन्दर की आँखों में आँसू आ गए।

काँपते हुए गले से वह बोली, “मैं पहले मरूंगी। आप आज गाँठ बाँध लीजिये यदि फिर वह बात कही तो लड्डू खट्टू कुछ नहीं खिलाऊंगी।”

उन आँसुओं के दर्पण में रघुनाथसिंह ने अपने प्राणों की भाँकी देखी। मुन्दर आँसू पोंछ कर चली गई। रघुनाथसिंह को सारा वातावरण नवप्रस्फुटित कलियों से भरा दिखलाई पड़ा। तोप एक खिलवाड़, बारूद और गोले प्यार के खिलौने जान पड़े।”

रघुनाथसिंह अन्त तक रानी के साथ रहे। जब रानी मर गई तब भी वे वहाँ से पीठ दिखाकर नहीं भागे। उन्होंने अपनी बन्दकें भरीं, गोले बारूद के भाँले लटकाये और आड़ लेकर एक

स्थान पर छुप गये । 'धौंय-धौंय' बन्दूकें चलाई । फिर एक गोली से मारे गए ।

उनके चरित्र में वीरता, साहस, देश भक्ति और बलिदान के सब गुण प्रचुरता से वर्तमान हैं । बे उपन्यास के एक आदर्श पात्र के रूप में हमारे सम्मुख आते हैं ।

६—दीवान जवाहरसिंह—

रघुनाथसिंह की ही कांठि के मन्चे, वीर स्वामीभक्त, देश-भक्त और आज्ञापालक सेवक है । रानी को उन पर अखण्ड विश्वास है । रानी की आज्ञा से अन्त में उन्होंने रानी के पाँव छूकर कटीली की ओर प्रस्थान किया ।

१०—गौस खाँ—

देशभक्त, वीर तोपची अपनी कला में बेमिसाल, वीर । यह अन्त तक रानी की ओर से लड़ते रहे । रानी के तोपखाने की शक्ति इन्हीं के हाथ में थी ।

नारी पात्र—सुन्दर, मुन्दर और काशीबाई

सुन्दर—

सुन्दर रानी लक्ष्मीबाई की एक दासी है । जब यह आई थी तो अवस्था १२ वर्ष के ऊपर, शरीर छरेंरा, रंग साँवला, चेहरा लम्बा आँखें बड़ी, नाक सीधी, ललाट प्रशस्त और उजला । बड़ी हाँकस यह रानी की भक्त, सेविका, युद्धविद्या में निपुण, बन्दूक तोप इत्यादि के दागने में चतुर रही ।

मुन्दर—

रानी की एक धीर वीर साहसी दासी । युद्ध विद्या में निपुण सब से निपुण घुड़ सवार । दीवान रघुनाथसिंह की प्रेमिका थीं । इनका प्रेम विशुद्ध और सच्चा था । देश प्रेम की बलिबेदी पर बलिदान हो गईं ।

काशीवाई—

युद्ध में निपुण साहसी दासी । रानी की सदा वफादार रहीं ।
रानी ने इन तीनों को घुड़सवारी, व्यायाम, युद्ध विद्या में पारंगत
कर दिया था । स्वातन्त्र्य युद्ध में इन तीनों ने बड़ा कार्य किया था ।

मोतीबाई और जुही—

राजा गंगाधर राव की नाट्यशाला में मोतीबाई और जुही
दो नर्तकिण् थीं । मोतीबाई गायन वादन में बड़ी कुशल थी । उसका
अभिनय उच्च कोटि का होता था, स्वास्थ्य और यौवन से परिपूर्ण
थी । वह खुदाबक्श की ओर आकृष्ट हो गई । राजा को बुरा लगा ।
मोतीबाई निकाल दी गई ।

जुही अल्प-वयस्का नर्तकी थी । वह उनाव दरवाजे के भीतर
मेवातीपुरा के सिरे पर रहती थी । रगमंच पर इसका नृत्य और
गायन अधिक होता था, अभिनय कम । आगे चलकर यह जासूस
विभाग में मोतीबाई की नायब बनी । तात्या टोपे से इसका प्रेम हो
गया था । फौजों में जाकर इसने बड़ी सफलता से जासूसी का कार्य
किया था । स्वातन्त्र्य युद्ध में दोनों ने अच्छा कार्य किया । वह
सुन्दर, राष्ट्रभक्त, सैनिक, कुटिल राजनीतिज्ञ और कुशल
अश्वारोही थी ।

भलकारी—

उपन्यास की एक आदर्श चरित्र पात्री है । वह निर्भीक, वीर,
और पराक्रमी है । रानी से उसे प्रगाढ़ स्नेह है । पूरन उसका पति
है । प्राचीन संस्कारों में पत्नी होने के कारण वह उसका नाम नहीं
ले पाती । आखेट का उसे शौक है । एक दिन वह गोली चला रही
थी कि एक बछिया के गोली लग जाती है । बड़ी कठिनता से
कोरियों ने इसका प्रायश्चित्त कम किया । अन्त में रानी की कृपा
से पश्चाताप हुआ । जब रानी भौंसी से भाग निकली तो भलकारी
ने बड़े साहस का कार्य किया था । ४ अप्रैल १८५८ की रात को

निकल जाने पर बड़े सबेरे भलकारी घोड़े पर बैठकर जनरल रोज के समक्ष पहुँची और उससे कहा, “रानी को कहाँ ढूँढ़ने फिरते हो ? मैं हूँ रानी, पकड़ लो मुझको ।” कुछ काल के लिये अंगरेज घोड़े में आ भी गये, पर बाद में बात खुली, तो उसे छोड़ दिया गया । इससे उसका अपूर्व साहस, बलिदान, रानी के प्रति प्रेम, श्रद्धा, विदेशियों से टक्कर लेने में निर्भयता और शक्ति प्रकट होती है । रानी इन्हें इतना प्रेम करती थीं कि कारिन होते हुए भी हरदी कूँ कूँ के अघसर पर इन्हे अपने अङ्ग में भर लिया था ।

चरित्र चित्रण की विशेषताएँ

१—आदर्श चरित्रों की सृष्टि:—

इस उपन्यास के पात्रों को देख कर जो पहली बात हमारा ध्यान आकृष्ट करती है, वह इसमें मिलने वाले आदर्श चरित्र है । हर प्रकार का आदर्श हमें इन में मिल जाता है । मूल चरित्र रानी लक्ष्मीबाई का है जो एक आदर्श पत्नी, माता, राज माता, योद्धा और राजनैतिज्ञ हैं । उनमें एक ओर शरीर की शक्ति दृढ़ता, सौन्दर्य है, तो दूसरी ओर पतिव्रता धर्म के प्रति अनुराग, बच्चे के प्रति वात्सल्य और अपने देश धर्म और स्वतन्त्रता के प्रति श्रद्धा । “वे, आदर्श की प्रतिमा हैं, उनमें दुर्बलता कहीं दिखाई ही नहीं पड़ती । उनके सम्पर्क में आने वाले स्त्री पुरुष अधिकतर आदर्श ही हैं ।”

उदाहरण के तौर पर बख्शी—बख्शानज, पूरन—भलकारी, मुन्दर—रघुनाथसिंह, जुही तात्या आदर्श प्रेम के उदाहरण हैं । इनमें से प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में स्वदेशानुराग, देश पर बलिदान होने की भावना, त्याग, वीरता और आज्ञापालन के गुण भी भर दिये गये हैं ।

नारायण शाम्त्री और छोटी मेहतरानी का सम्बन्ध अनुचित है, किन्तु हम जब शास्त्री जी का बलिदान एवं छोटी की निष्ठा

त्याग, अद्भुत बलिदान की क्षमता देखते हैं, तो हमें श्रद्धा से नत-मस्तक हो जाना पड़ता है।

सेवक और सिपाही के अनेक आदर्श हमें आसानी से उप-न्यास में उपलब्ध हो जाते हैं। गुलामुहम्मद जैसा वीर आज्ञापालक पठान, गौसखॉ जैसा सरुवा तोपची, रघनाथसिंह और जवाहरसिंह जैसे सिपाही, और तात्या टोपे, नाना जैसे स्वामीभक्त देशप्रेमी इस उपन्यास में मिलते हैं। लेखक आदर्श के प्रति सतत प्रयत्नशील है। वह कहता है—

“अपने आदर्श को कभी न भूलना—प्रयत्न ही पहली और पक्की सीढ़ी है।”

आदर्श चरित्रों की महत्ता प्रकट करने और उनके चरित्रों के सब पहलू बनकाने के लिये वर्मा जी हैं कुछ दुर्बल चरित्रों की भी सृष्टि की है, जैसे दूल्हाजू, पीरअली इत्यादि।

स्थिर एवं गतिशील चरित्रः—

इस उपन्यास में दोनों प्रकार के चरित्रों का प्रयोग है। प्रथम वर्ग में वे पात्र हैं जो स्थिर हैं अर्थात् जिनका चरित्र एक ढाँचे में, एक विशेष दिशा, या विचार धारा में ढला हुआ है। ये बदलते नहीं। आरम्भ में अन्त तक एक से बने रहते हैं। अधिकतर इस वर्ग में वे आदर्श चरित्र हैं, जो अपने देशप्रेम, सततोद्दोग, दृढ़ता और आत्मविश्वास से हमें प्रभावित करते हैं। इस वर्ग में लक्ष्मीबाई, तात्या, नाना, सुन्दर, कलकारी आते हैं।

द्वितीय वर्ग में गतिशील अर्थात् विकसित होते निरन्तर परिवर्तित होते हुए चरित्र हैं। डाकू सागरसिंह डाकू से कैप्टन बनता है। धीरे-२ वह हमें अपनी स्वाभक्ति और वीरता के प्रभावित कर लेता है।

दूल्हाजू पहिले रानी की ओर से मनोयोग पूर्वक युद्ध करते हैं। तनिक सी बात से नाराज होकर विश्वासघाती पीरअली से

पड़्यंत्र करते हैं अन्त में युद्ध के समय दुर्ग के फाटक खोल देते हैं, सुन्दर के बध का कारण बनते हैं।

इसी प्रकार मांतीबाई और खुदाबग़्श, भी निरन्तर विकसित होते रहते हैं। प्रारंभ में उन्हें राजा गंगाधर राव निकाल देते हैं, पर अन्त में ये दोनों राज भक्त प्रेमियों के रूप में हमारे समक्ष आते हैं।

बग़्शी बग़्शानजू, पूरन भलकारी भी गतिशील हैं। भलकारी आरम्भ में एक लज्जाशीला, कमनीय, नागी के रूप में हमारे सम्मुख आती है, धीरे २ वीर युद्ध प्रेमी बनती है, शिकार की ओर उसकी प्रवृत्ति हो जाती है। अन्त में वह इतनी निर्भय बन जाती है कि रानी लक्ष्मीबाई जैसे वस्त्र पहिन कर आंग्रेज जनरल के सम्मुख पहुँच जाती है।

स्वयं रानी लक्ष्मीबाई का चरित्र भी विकसित होता चलता है। अन्त तक पहुँचते २ वे धार्मिक प्रवृत्ति की नागी, अद्वितीय राज-नीतिज्ञ एवं गण-पंडिता बन जाती हैं। उनकी विनादप्रियता कम हो जाती है और गर्भीरता, दाशानिकता, दयालुता और दानशीलता बढ़ जाती है।

वर्मा जी ने दोनों प्रकार के चरित्रों का मनोवैज्ञानिक विकास प्रस्तुत किया है। इन पात्रों के अन्तर्द्वन्द्वों को भी स्पष्ट कर दिया गया है।

वर्ग गत और व्यक्तिगत पात्र--

वर्गगत पात्रों में उपन्यासकार का लक्ष्य सामान्य गुण चित्रित करना रहता है। पात्रों के कुछ वर्ग बनाये जा सकते हैं, और इनमें कुछ सामान्य गुण पाये जाते हैं। ये अपने वर्ग, देश, जाति का प्रतिनिधित्व करते हैं। उदाहरण स्वरूप आंगरेज पात्रों (डनलप, एलिम, गार्डेन, मालकम, रोज इत्यादि) को ले लीजिये। इनमें चतुराई, कुटिलता, स्वार्थ मिद्धि, व्यापार कुशलता के सामान्य (common) गुण मिलते हैं। ये सदा अपना उल्लू सीधा करना

चाहते हैं। भारतीय नरेशों का शोषण, अर्थ संचय, देशी राज्यों को कम्पनी के राज्य में मिलाना, ये प्रवृत्तियाँ प्रत्येक अङ्गरेज पात्र में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से विद्यमान हैं।

अंगरेज पात्रों का भावनामियों से घृणा है। यह घृणा किसी न किसी रूप में उनके हृदय से निकली है। उदाहरण के लिए कुछ वाक्यांश देखिये :—

“हाँ, पहले उन्होंने कहा हमारा टीका है। धर्म की बात। फिर हमने पुछवा दिया। डैमट आल। भई कितनी जद्दालत भरा मुल्क है।”

“अभी यह कौम बिल्कुल नादान और जाहिल है। अंगरेजी पढ़ने से कुछ अकल सुधरेगी। बाईबिल का पढ़ना मदरसों में इसीलिये जारी किया गया है। जब अंगरेजी का प्रचार हो जायेगा और बाईबिल की संस्कृति इनके खून में बैठ जायगी, तब धरातल कुछ ऊँचा होगा।”

“हिन्दुओं की गाँठ में शकुन्तला, कुछ वेद और कुछ ऐसा ही साहित्य है। मुसलमानों के पास कुरान, गुलिस्ताँ, बोस्ताँ और उमर खैय्याम की रुबाइयाँ। वस खतम। बाकी सब कूड़ा, महज रही।

“देश कुसंस्कारों से भरा हुआ है। किसान बहुत मेहनती नहीं है। चोर डाकुओं के मारे चैन नहीं ले पाते हैं। रियासतों में बड़ा अन्धेरे है।”

....

दूसरे वर्ग में देश भक्त पात्र आते हैं। गुल मुहम्मद, गौसखॉ, रघुनाथसिंह, जवाहरसिंह, तात्या, नाना स्वामीभक्त, देशभक्त, आझापालक सेवक हैं। ये अपने कर्तव्य के प्रति निरन्तर जागरूक हैं। इनमें देश प्रेम, वीरता, निष्ठा, सत्यता विद्यमान है। ये दोनों वर्ग (type) सफलता से चित्रित हुये हैं।

व्यक्तिगत पात्रों में वैयक्तिक विशेषताएँ होती हैं। उपन्यास

कार प्रत्येक व्यक्ति को अपने पृथक् रूप में चित्रित करता है। इस वर्ग के पात्रों में सामान्य गुण एक से हाने पर भी निजी विशेषताएं अन्तर्निहित रहती हैं। इस वर्ग में रानी लक्ष्मीबाई, राव गगाधर, अली बहादुर, भुलकारी, बख्शी, सोती खुदाबख्श और तात्या आते हैं। प्रत्येक की अपनी विशेषताएं और दुबलताएं हैं, जिनके कारण हम उन्हें पसन्द करते या घृणा प्रदर्शित करते हैं। इनमें से कुछ पात्र अपने चरित्र गौरव के कारण हमारे स्थायी मित्र हो जाते हैं। इनमें गुलमुहम्मद और बरहानुद्दीन आदर्श व्यक्ति हैं।

चरित्र चित्रण में मनोवैज्ञानिक आधार

यों तो घटना-प्रधान उपन्यास में चरित्र विश्लेषण की गुञ्जायश बहुत कम रहती है, क्योंकि उपन्यासकार के पास असंख्य घटनाओं के वर्णन की समस्या रहती है। फिर भी, वर्मा जी ने लक्ष्मीबाई का चरित्र विकास मनोवैज्ञानिक आधार पर किया है। बाल्य जीवन में जिन चरित्रगत विशेषताओं का निदर्शन है, वे ही हमें क्रम क्रम से विकसित होती दीखती हैं। स्वतन्त्र प्रेम, राजनीति अश्व-संचालन, युद्धविद्या में निपुणता और बड़ी-बड़ी लड़ाइयों में नेतृत्व ये सब हमें धीरे धीरे विकसित होते दिखाये जाते हैं।

दूल्हाजू प्रेम में विरक्त होकर शत्रु बन बैठता है, उसके चरित्र के विकास में अहंभाव का विश्लेषण है। मागरमिह का डाकू बनना फिर रानी लक्ष्मीबाई के सम्पर्क में रह कर कुशल सैनिक बनना, अलीबहादुर का चित्रण, नारायण शाम्भोटी के रोमाँस में मनोवैज्ञानिक आधार है।

नारी हृदय कोमल भावनाओं का अगाध सागर है। हरदी कूँ कूँ के उत्सव पर सधवा स्त्रियाँ एक दूसरे के रोली का टीका लगाती हैं और उनको किसी न किसी बहाने अपने पति का नाम लेना पड़ता है। रानी लक्ष्मीबाई भी इस उत्सव में भाग लेती हैं। बख्शान से पति का नाम पूछने पर जो नाना लज्जा की भावनाएं

हैं। लेखक ने बड़े सुन्दर रूप में चित्रित की हैं। प्रेम तत्व का मनो-वैज्ञानिक विश्लेषण सुन्दर बन पड़ा है। भौंसी के कलाकारों की प्रशंसा में रानी का दुर्गा का सिद्धार्थ बनाना मानी का खटकता है। नौकरो, सैनिकों, देशवासियों, कलाकारों, नर्तकियों सभी के चरित्रों का आन्तरिक पक्ष देकर ठोस मनोवैज्ञानिक भित्तियों पर खड़ा किया गया है।

वातावरण

इस उपन्यास का सर्वाधिक आकर्षण केन्द्र इसकी ऐतिहासिक सामाजिक, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि है। बर्मा जी के उपन्यासों में देश काल का चित्रण बड़ा सूक्ष्म और सजीव होता है। जहाँ वे ऐतिहासिक दृष्टि से तत्कालीन सामाजिक पृष्ठभूमि चित्रित करते हैं, वहाँ गढ़, किले, नगर, प्रदेश, समीप का वातावरण, वृत्त इत्यादि के भी व्यवहार वर्णन करते हैं।

ऐतिहासिक वातावरण:—

स्वयं भौंसी के निवासी होने के कारण, बर्मा जी ने भौंसी की रानी लक्ष्मीबाई उपन्यास के ऐतिहासिक वातावरण को पूर्ण प्रमाणिक रखा है। इसके पीछे १४ वर्ष का पठन पाठन, ऐतिहासिक अनुसंधान और अध्ययन है। भूमिका में बर्मा जी ने अपने ऐतिहासिक अनुसन्धानों के विषय में निर्देश कर दिया है:—

“सन १६३० में मैं इन अनुसंधानों में लगा। कलकटरी में कुछ सामग्री मिली। १८५७ में लोगों के बयान लिये गये थे। इनको मैंने पढ़ा। इनको पढ़कर मैं अपने विश्वास में और दृढ़ हुआ—रानी “स्वराज्य” के लिए लड़ी थी। मैंने निश्चय किया कि उपन्यास लिखूंगा, ऐसा जो इतिहास के रंग-रेशे से सम्मत हो और उसके सन्दर्भ में हो। इतिहास के काल में भास और रक्त का संचार करने के लिये मुझको उपन्यास ही अच्छा साधन प्रतीत हुआ। उस

इस वक्तव्य से स्पष्ट हो जाता है कि ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की सचाई के लिए उपन्यासकार प्रारंभ से जागरूक है। कथा के ऐतिहासिकता की रक्षा के लिए उन्होंने रानी लक्ष्मीबाई के संबंध की जो सामग्री उपलब्ध की उसका कलात्मक उपयोग किया है। यत्र तत्र ऐतिहासिक निर्देश (References) और परिशिष्ट में स्पष्टीकरण कर दिया है, जिससे ऐतिहासिक सत्यता प्रगट हो सके।

यह उपन्यास भॉंसी के इतिहास से प्रारंभ होता है। “प्रस्तावना” भाग के १४ पृष्ठ भॉंसी का इतिहास देकर तत्कालीन परिस्थितियों को स्पष्ट कर दिया है। सन् १८०४ में अंग्रेजों की पहली संधि और शिवराव भाऊ का शासन, उनके पुत्रों इत्यादि का संक्षेप में स्पष्टीकरण कर दिया गया है। शिवराव भाऊ भॉंसी के शासक थे और वह सूबेदार कहलाते थे। पेशवाई निर्बल हो चुकी थी, सूबेदार मशकूत थे। बुन्देलखण्ड को अधिकृत करने के लिए अंग्रेजों को भॉंसी के सूबेदार की मित्रता अभीष्ट थी। सन् १८०४ की संधि को बुन्देलखण्ड के रजवाड़ों पर प्रभाव पड़ा। सन् १८१७ में बाजीराव से अंग्रेजों की अन्तिम संधि हुई। इस संधि ने पेशवा के संपूर्ण अधिकार ईस्ट इण्डिया कम्पनी को दे दिये। उसी वर्ष शिवराव भाऊ के पौत्र रामचन्द्र राव के साथ दूसरी संधि हुई, जिसमें पेशवा का स्थानापन्न कम्पनी सरकार को मनवाया गया। सन् १८३० में रामचन्द्रराव और उसके वारिसों को राजा की उपाधि दी गई। उस दरबार में शिवराव भाऊ के पुत्र रघुनाथ राव और गंगाधरराव भी थे। शिवरावभाऊ का जेठा पुत्र कृष्णराव था। उसका देहान्त हो चुका था। रामचन्द्र, कृष्णराव को पुत्र था। शिवराव भाऊ के जेठे पुत्र की सन्तान होने के कारण भॉंसी की गद्दी उसको मिली थी।

रामचन्द्रराव की नाबालिगी के जमाने में शासन सूत्र उसकी

माँ सख्वाई के हाथ में था। जब वह बयस्क हो गया तो रामचन्द्र राव ने शामन सूत्र अपने हाथ में ले लिया। माँ को यह अख़्बरा और उमने पुत्र के बध का प्रयत्न किया पर रामचन्द्रराव बच गया। रामचन्द्रराव अपनी माँ के साथ कठोर व्यवहार नहीं करना चाहता था। परन्तु उसके दोनों काका रघुनाथमिह और गंगाधर राव, तथा दीवान सख्वाई को स्वतन्त्र नहीं छोड़ना चाहते थे। अतः वह कैद कर दी गई। रामचन्द्रराव निम्संतान मरा। फिर रघुनाथ-राव गद्दी पर बैठे। ये रंगीली प्रकृति के व्यक्ति थे। सन् १८३८ में रघुनाथराव का देहान्त हो गया। अनेक भगड़ों के उपरान्त सन १८३६ में गंगाधरराव भांसी की गद्दी पर बैठे। सम्पूर्ण उपन्यास इनके शासनकाल तथा इनकी विधवा रानी लक्ष्मीबाई से सम्बन्धित है। लेखक ने यत्र तत्र घरेलू ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि के गहरे रंगों में प्रस्तुत किया है।

जब राजा गंगाधरराव गद्दी पर बैठे, भांसी राज्य के शासन को अंग्रेजों द्वारा चलते हुए ७-८ वर्ष हो गए थे। नगर का शासन राजा के हाथ में चला आता था। उपन्यासकार ने राजा गंगाधर राव के व्यक्तिगत जीवन तथा भांसी के सामूहिक सामूजिक जीवन पर भी विहंगम दृष्टि डाली है। भारत के अन्य भागों के संचालन एवं शासन पर भी प्रकाश डाला गया है।

राजनैतिक स्थिति—

भारत पर अंग्रेजों का आधिपत्य क्रमशः फैलता जा रहा था ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अधिकारी जन धीरे-२ अंग्रेजों का प्रभुत्व फैलाते जा रहे थे। भांसी पर भी उनका अधिकार था। उन दिनों भांसी का नायब पोलिटिकल एजेंट कप्तान डनलप था। राजा गङ्गाधरराव शासन अधिकार पाने की कोशिश पहले से ही कर रहे थे। विवाह के उपरान्त उन्हें ये अधिकार प्राप्त हो गये, परन्तु मिलने से पूर्व कम्पनी सरकार के साथ फिर अहदनामा हुआ।

अङ्गरेजी हुकूमत में भाँसी में एक फौज रखी जाने की शर्त थी। नकद खर्चा न देकर राजा गंगाधरगव ने २ लाख २० हजार चार सौ अठ्ठावन रुपये वार्षिक की आय राज्य लोलुप अंग्रेजों का दे दी थी। कप्तान गार्डन भाँसी स्थित अंग्रेजी सेना का एक अफसर था। वह पूरा अंग्रेज था—साहित्यिक, व्यापार कुशल स्वदेश प्रेमी, और भारतवर्ष को घृणा या अवहेलना की वृत्ति से देखने वाला। अङ्गरेजों की दृष्टि भारत में रूपया ले जाकर इङ्ग्लैण्ड को समृद्धि-शाली बनाने की रहती थी।

भारतीय देशी राजा विलाम में डूबे हुए थे। शराब, नर्त-क्रियाँ और आमाद-प्रमोद की भीड़ लगी रहती थी। उनमें फूट थी, जरा जरा सी बान पर बे परस्पर लड़ा भगड़ा करते थे। अंग्रेजों का चौरस करने वाला बेलन बेतहाशा, लगातार और जोर के साथ चल रहा था। अंग्रेज लोग अपनी दूकान में हिन्दुस्तान को अधूरी या अधकचरी मौदा का रूप लिए नहीं देख सकते थे। मौदा मिलते ही वे छोटे मोटे रजवाड़ों को हजम कर लेते थे।

वे चाहते थे कि भारतीय ऊँचे पदों पर न पहुँचने पावें, भारतीय संस्कृति न पनपे, भारत की समृद्धि बढ़ने न पावे। जनता स्वाधीनता का नाम ले तो उसको बड़ी रियासतों के अन्धेरों का संकेत कर चुप कर दिया जावे। बड़ी रियासत वाले जरा सा भी मिर उठावें, तो छोटी रियासतों को किमा न किसी बहाने घोट घोट कर बड़ी रियासतों को चुप रहने का सबक सिखाया जावे। पंचायतों का नाश कर दिया। वाइबिल की शिक्षा अनिवार्य कर दी गई।

जयपुर, जोधपुर, बीकानेर इत्यादि राजपूत राज्य तटस्थ अपनी स्वतन्त्रता बनाये रखने में बड़प्पन मान रहे थे। निजाम हैदराबाद और ग्वालियर का सिन्धिया अंग्रेजों को निज मित्र समझ कर उनके कार्यों में हस्तक्षेप न करते थे। बड़े बड़े राजा, महाराजा और नवाब अपनी अपनी जनता का दामन छोड़कर

अंग्रेजों का मुँह ताकने लगे थे। पुरुस्वार्थ जेप न रहा था। इस लिए विलासिता के पोखरों में घुस पड़े थे। अंग्रेजी बंदूक और संगीन उनकी पीठ पर थी। कोई भी जनता की परवाह न करता था।

अंग्रेजों ने पंजाब को परास्त करके हाल ही में अपने हाथ में किया था। बिहार और बंगाल में राज्य था ही। मध्यदेश बपौती का रूप धारण करता चला जा रहा था। इन सबके बीच में दो बड़े बड़े रांडे थे—एक अवध की मुसलमानी नवाबी और दूसरी भौंसी की बड़ी हिन्दू रियासत। वे चाहते थे कि किसी प्रकार इन दोनों का भी समाप्त कर स्थायी रूप से कम्पनी के राज्य में सम्मिलित कर लिया जावे।

ऐसी विपन्न स्थिति में भौंसी की रानी लक्ष्मीबाई ने सुप्रभारत को जाग्रत करने के लिए शंख फूँका। स्वयं वे तान्या टोपे, नाना और अन्य स्वतन्त्रता प्रेमी महानुभावों की सहायता से स्वातन्त्र्य योजना कार्यान्वित करती रहीं। बहुत काल तक संघर्ष चला, छावनियों में अंग्रेजों के प्रति घृणा का प्रचार हुआ। १८५७ में भारतीय क्रांति फैली, जिसमें अनेक स्वातन्त्र्य प्रिय व्यक्तियों ने भाग लिया। सबसे महत्त्वपूर्ण भाग रानी लक्ष्मीबाई का था। यही इस उपन्यास में चित्रित किया गया है।

प्रारंभ से अन्त तक उपन्यासकार ने भारत की राजनैतिक परिस्थिति का परिचय कराया है। उसकी दृष्टि केवल भौंसी पर ही नहीं प्रत्युत समग्र भारत की राजनैतिक उथल पुथल संघर्ष और क्रांति पर रहा है।

उपन्यासकार ने चित्रित किया है कि भौंसी की रानी लक्ष्मीबाई केवल आपकी निजी सम्पत्ति, प्रतिष्ठा या आन के लिए नहीं लड़ी, प्रत्युत वे समस्त भारत में व्याप्त स्वाधीनता सपना की नेत्री बन गई। उनकी योजना सबने एक स्वर से स्वीकार की; आजीवन वे देश की आजादी और विदेशियों को निकालने के प्रयत्न में रहीं और अन्त में स्वराज्य की नींव का प्रथम पत्थर बनीं।

सामाजिक एवं धार्मिक स्थिति—

सामाजिक जीवन की भाँकी प्रस्तुत कर वर्मा जी ने इस उपन्यास का सजीव बना दिया है। यह राजा-रानियों या नवाबों का उपन्यास ही नहीं, साधारण जनता के दुख दर्द एवं सामाजिक स्थिति से भी सम्बन्धित है।

भाँसी में उस समय मन्त्रशास्त्री, तन्त्रशास्त्री, वैद्य, रणविद इत्यादि अनेक प्रकार के विशेषज्ञ थे। शक्ति, शैव, वाममार्गी, वैष्णव, सभी काफी तादाद में रहते थे। अधिकांश वैष्णव एवं शैव थे—इन सब के संघर्ष में अनेक जातियाँ और उपजातियाँ जिनको शूद्र समझा जाता था, उन्नति की ओर अग्रसर हो रही थीं। व्यक्तिगत चरित्र का सुधार, घरेलू जीवन की अधिक शान्त और सुखी बनाना तथा जातियों की श्रेणी में ऊँचा स्थान पाना यह उस प्रगति की सहज आकांक्षा थी। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य जनेऊ पहिन्ते थे—यह उनकी ऊँचाई की निशानी थी। ब्राह्मण प्रायः कट्टर होते थे।

कुछ शूद्रों ने जनेऊ पहिन्ने आरंभ कर दिये थे। उनके इस काम में बुन्देलखण्डी और महाराष्ट्र ब्राह्मणों का समर्थन था। भाँसी नगर में ब्राह्मण काफी संख्या में थे। इन सब का बहुत बड़ा भाग इस प्रगति के विरुद्ध था। इस लिए आन्दोलन प्रायः पुराने मत के पक्ष में चलते रहते थे।

“समाज में सन्तुलन यथेष्ट नहीं था। असमानता, विषमता स्पष्ट थी। परन्तु आर्थिक शृंखला की कड़ियाँ मजबूती के साथ जुड़ी हुई थीं। धन इकट्ठा हो होकर बट जाता था। एक-एक आश्रित पर शत-शत आश्रित टँगे हुए थे लिप्त और संलग्न थे। आश्रय और आश्रित सब क्रियाशील। जहाँ आश्रम श्रमहीन, प्रयत्न रहित और दुःशील हुआ कि गया और उसका स्थान दूसरे प्रबल सबल स्थान-पन्न ने ग्रहण किया। खोखला गौरव अपनी कहानी बहुत अल्प

तृतीय खण्ड

भाँसी की रानी : कथानक-मौन्दर्य

१—महत्व :—

वमा जी ने इस वृद्ध उपन्यास का कथानक पर्याप्त ऐतिहासिक अनुसन्धान के आश्रित तैयार किया है। अपनी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के लिए यह पर्याप्त ख्याति प्राप्त कर चुका है। समभवतः इसकी ऐतिहासिक कथा भी उनके अन्य सब ऐतिहासिक उपन्यासों की कथाओं से अधिक लाक्षणिक, महत्वपूर्ण और विशिष्ट है। भाँसी की रानी लक्ष्मीबाई पर अनेक नाटक, उपन्यास, कहानियाँ लिखी जा चुकी हैं, परन्तु वमा जी के प्रस्तुत उपन्यास में अधिक प्रमाणिक और रासिक पुस्तक पढ़ने लक्ष्मीबाई की। यह उनके १४ वर्ष की ऐतिहासिक खान-बीन, अध्ययन, अवगण का परिणाम है। अतएव ऐतिहासिक प्रमाणिकता और अनुसन्धान की दृष्टि से इस उपन्यास में दी गई जानकारी का महत्व असाध्य है। इसके अध्ययन से १८५७ के लगभग भारत की राजनीतिक और सामाजिक दशा का अच्छा ज्ञान हो जाता है। इसमें देशव्यापी स्वराज्य-आन्दोलन की याजना एवं १८५७ की भारतीय क्रान्ति का सजीव चित्र उपस्थित कर दिया गया है। यह वह युग था, जब भारत ने पराधीनता की बेड़ियों को तोड़ फोड़ कर फेंक देने का एक महान प्रयत्न किया था। महाराणी लक्ष्मीबाई स्वराज्य स्थापन के लिए सतत युद्ध करती रहीं और उसी पर अपना जीवन न्यौछावर कर दिया। अपने समस्त जीवन में रानी लक्ष्मीबाई का एक ही उद्देश्य रहा था—स्वराज्य स्थापन। वे अङ्गरेजों को इस देश से निकाल कर भारतीय राज्य स्थापित करने के पक्ष में थीं। उन्होंने कई बार देश की

विशृङ्खलित शक्तियों को एकत्र कर नेतृत्व किया और अंग्रेजी सेना से युद्ध किया। जब तक प्राण रहे, उन्होंने अपनी साधना न छोड़ी। अन्त में मर कर स्वराज्य की नींव का पत्थर बनी। उपन्यास का कथानक राष्ट्रीय जागृति की विचारधारा से परिपूर्ण है।

कथा वस्तु-विकास—

वर्मा जी ने विस्तृत ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि के पश्चात् मूल कथा वस्तु को क्रम क्रम से उभागा है। इस कथा वस्तु के निर्माण में विस्तार से काम लिया गया है, जिसमें पाठक को भौसी के इतिहास राजकीय वंश, राजनैतिक परिस्थिति, अंग्रेजों से सम्बंधित शिवराज भाऊ के पुत्रों का राज्य सत्ता संचालन, रामचन्द्रराव के पश्चात् भौसी की गद्दी रघुनाथ राव और गंगाधर राव को प्राप्त होना मालूम हो जाय। इसी भाग में गंगाधर राव के रसिक स्वभाव का भी परिचय दे दिया गया है। उपन्यास के कथानक के प्रारम्भ होने के समय भौसी की गद्दी पर राजा गंगाधर राव को बैठे और भौसी राज्य को अंग्रेजों द्वारा चलते ७-८ वर्ष व्यतीत हो गए थे। नगर का शासन गंगाधर राव के हाथ में था और शेष राज्य का कम्पनी के कर्मचारियों के अधिकार में। गंगाधर राव रसिक, सहित्य और ललित कलाओं के प्रेमी, नाटकों के पारखी, अभिनेता थे। वे संस्कृत नाटकों का अनुवाद हिन्दी और मराठी में करवाया करते थे। स्वयं अभिनय किया करते थे। इसी प्रकार वे अपना विधुर जीवन व्यतीत करते थे।

कथावस्तु को वर्मा जी ने तीन बृहत् भागों में विभाजित किया है—

(१) उदय अर्थात् देशव्यापी आन्दोलन का रानी लक्ष्मी-बाई के नेतृत्व में उदय—

(२) मध्यान्ह अर्थात् १८५७ की राज्यक्रान्ति।

(३) अस्त अर्थात् जनरल ह्यरोज द्वारा विद्रोहकारियों का

नृशंसतापूर्वक दमन । इन तीनों भागों का विस्तार से देखने पर इनमें विशुद्ध ऐतिहासिक तथ्यों के अतिरिक्त सुसम्बद्धता भी मिलती है ।

उरुय —

“उरुय” भाग में मनु (लक्ष्मीबाई) के जन्म, बाल्यकाल विवाह और विधवा जीवन की एक झलकी दी गई है । पेशवा के पश्चात बाजीराव द्वितीय अपने कामदार मोगोरान्त के साथ विठ्ठर में रहा करते थे । मोगोरान्त के एक कन्या थी, जिसका नाम मनु था—बुद्धि की कुशाग्र तेज और चपल बुद्धि । उनकी माता भार्गीरथी बाई का देहान्त चार वर्ष की आयु में ही हो गया था । अबएव लालन पालन पिता द्वारा ही हुआ था ।

बाजीराव प्यार से उसे “छुब्रीली” कहा करते थे । बाजीराव ने नाना धोंरूपन्त नामक एक बालक को गद्द लिया था । मनु इसी के साथ खेलती थी । बचपन में ही नारंगी एव स्वातन्त्र्य प्रेमी भारतीय वीर पुरुषों के पुरुषार्थ का गाथाएँ सुनते सुनते मनु में देश को स्वतन्त्र करने की उद्यम लालना उदीप्त हो उठी । बड़ी होने पर तात्या दीक्षित की सहायता से मनु का विवाह भांसी के विधुर राजा गंगाधरराव से हो गया और उसका नामलक्ष्मीबाई रखा गया । उसके साथ सुन्दर मुन्दर और काशी भी आईं । विवाह होने के पूर्व गंगाधर राव को शासन का अधिकार न था । उन दिनों भांसी का नवाब पोलिटिकल एजेंट कप्तान इनतलप था । वह राजा के पास आया जाया करता था । गंगाधर राव ये अधिकार प्राप्त करने के प्रयत्न पहिले से ही कर रहे थे । विवाह के उपरान्त उनकी अधिकार मिल गया । केवल यह शर्त थी कि एक अंग्रेजी फौज रखी जावेगी जिसका व्यय भांसी को देना होगा । गंगाधर राव प्रसन्नता से फूल उठा, दरबार हुआ, खुशियाँ मनाई गई ।

रानी लक्ष्मीबाई का विवाहित जीवन साधारणतः सुखी संतप्त्र ही कही जा सकता है । पर्व के कारण वे महल में नहीं निकल

पाती थीं। अतः सवारी, व्यायाम, हथियारों को चलाने का अभ्यास इत्यादि अपनी दिलचस्पी के कार्य थे किन्ते वाले मइल के इर्द गिर्द आड़ आँट से कर पाती थी और अपनी महेलियों तथा किन्ते के भीतर रहने वाली स्त्रियों का सवारी, शस्त्र प्रयोग मत्त स्वस्थ कुश्नी का अभ्यास करती थीं। गीता पढ़ती थीं। धीरे-धीरे उनसे सम्भीरता आई और लोकप्रियता बढ़ती गई। उन्हें इस बात का बड़ा दुःख था कि आगम के साथ भाभी का पञ्चवर्षा से अधिक अंग्रेजों के हाथ में चला गया था।

उधर अंग्रेज निरन्तर अपने राज्य का विस्तार करने चले आ रहे थे, हिन्दुस्तान में सर्वत्र फूट फैली थी, गाँव गाँव में उपद्रवी, डाकू बटमार भरे हुए थे। अंग्रेजों के पास सुनियोजित सेनाएँ और अच्छे हथियार थे। इस लिए उनका राज्य धीरे-धीरे बढ़ता जा रहा था।

रानी लक्ष्मीबाई ने शासन प्रबन्ध में रुचि ली और यह प्रयत्न किया कि अच्छी व्यवस्था बनी रहे। उन्हें भय था कि सुव्यवस्था बनी रही तो भाँसी राज्य बचा रहेगा अन्यथा अंग्रेज उसे फिर अपनी देख रेख में ले लेंगे।

रानी के एक पुत्र रत्न उत्पन्न हुआ, किन्तु देव दुर्घटिका से तीन मास पश्चात् उसकी मृत्यु हो गई। गंगाधर राव दुःखी रहने लगे। लगभग दो वर्ष पश्चात् उनकी भी मृत्यु हो गई। रानी लक्ष्मीबाई की आयु केवल १८ वर्ष की थी। इस दुर्घटना का उनके मन और तन पर बड़ा आघात हुआ, किन्तु स्वतन्त्र भावना उनकी जीवित रखे थी। तात्या टोपे और नाना धाडूपन्त ही उनकी इस राष्ट्रीय भावना में परिचित थे। राज्य का उत्तराधिकारी न होने के कारण रानी ने दामोदरराव को गोद लेने की प्रार्थना की, किन्तु भारतीय स्वतन्त्रताकादमन करने के इच्छुक अंग्रेजों ने उसे अस्वीकार कर दिया। यही नहीं, ७ मार्च १८५४ को भाँसी का राज्य ब्रिटिश साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया गया। भाँसी के निवासियों के क्षाभ का ठिकाना न था। रानी की सेना तुरन्त युद्ध छेड़ देना

चाहती थी, परन्तु गानी ने निवारण किया, उन्हें पांच हजार की आर्जिवन पेंशन दे दी गई।

अंग्रेजों की बुरी नियत से घृणा कर गानी देश व्यापी स्वाधीनता आन्दोलन की याजना निर्माण करने लगी। कभी कभी तान्धा टोपे भी उसमें वार्ता करने आते। नानासाहब, रावसाहब, दिल्ली मेरठ इत्यादि प्रदेशों के बहुत से मुसलमान प्राणों की होड़ लगा कर स्वराज्य आन्दोलन की यात्रणाएँ बनाने में जुट गए। कारण तूमों में चर्बी लगाने के कारण कुछ हिन्दू-नामियों ने प्रतिवाद किया, अंग्रेजों के प्रति घृणा उत्पन्न होती गई। अब अंग्रेज हिन्दू सिपाहियों को तिलक टीका लगायें हुए परेड में नहीं आने देते थे, इस कारण हिन्दू सिपाहियों में खिन्नता फैल गई। मऊ, मेरठ बाराकपुर इत्यादि छावनियों में साधू और फकीर विविध प्रकार के बेश और रूपक धारण कर सामूहिक क्रान्ति का कार्य करने लगे अंग्रेजों को ऊपर की तह चिकनो और समतल दीख रही थी, नीचे की इस व्यापक क्रान्ति का ज्ञान न था। इस देश की जनता व्यक्तित्व मग्न और महामस्कृत मयी है। बहुत दिनों तक कदापि विदेशी शासन सहन नहीं कर सकती। इस लिए गुलामी की अन्तर्व्यथा से पीड़ित जनता की अन्तर्गत्ता आसानी के साथ तत्कालीन स्वराज्य क्रान्ति के नेताओं की बात सुन रही थी और मन में गाँठों पर गाँठ बांधती चली जाती थी, कि कब अचानक भिने और निर में बोक उतार फेंके।

मध्याह्न—

साधु, नर्तकियों, गुप्तचरों द्वारा चुपचाप स्वराज्य आन्दोलन का कार्य चल रहा था। जुही भाँसी की छावनियों तथा छाटी ग्वालियर में प्रचार कार्य कर रही थी। तान्धा टोपे अपनी शक्ति बढ़ा रहे थे। नाना साहब संगठन में लगे रहे। एक विश्वस्त व्यक्ति अजीमत्ता को विलायत भेजा गया, अर्जी के द्वारा अपील की गई,

किन्तु वह स्वीकृत नहीं हुई। उधर अन्तर्गर्णीय क्षेत्रों में अंग्रेजों की शक्ति का हास हो रहा था।

सन १८२६ में ईस्ट इण्डिया कम्पनी के कर्णधार भारतवर्ष भर को, आर से छार तक उमाई बनाने का स्वप्न देखने लगे थे। कैनिंग ने विपत्ति के वादल को देख लिया था, पर ईसाई धर्म के प्रचार के लिए वह जार्ज आया और धर्म प्रचार के लिए हिन्दुस्तान के स्वजाने से निकाल कर रख दी।

उधर ताना साहब, तान्या, बहादुरशाह और उनकी बेगम जीनत महल, अवध की बेगम दत्तगढ़ महल और रानी लक्ष्मीबाई का स्वराज्य आन्दोलन प्रचार जारी था। स्वार्थीनता बुद्ध के लिए क्षेत्र तैयार हो रहा था। संयोग से सन १८३७ की जनवरी में एक घटना हो गई। दमदम की छावनी में एक मेहतर सिपाही से पानी पीने का एक लोटा माँगा। ब्राह्मण सिपाही मेहतर को लाटो कैसे देता। वह मेहतर हो या न हो प्रचारक अवश्य था। उसने ताना दिया। बोला—

“जात पॉत का यह घमण्ड ! आ रहे है कारतूस जिनको दान से खोलना पड़ेगा, जिसमें सूअर और गाय की चर्बी लगी है। देखें तुम्हारी जात उन कारतूसों के प्रयाग कै बाद रहती है, या नहीं।”

छावनियों में इस बात से सनसनी फैली, क्षोभ फैलता और बढ़ता गया। दमदम के इन सिपाहियों ने हज़ारों चिट्ठियाँ हिन्दुस्तान भर की छावनियों में भिजवाईं। झाँसी की छावनी में भी यह चिट्ठी आई। फरवरी में वारकपुर की ११ नम्बर पलटन को कारतूस प्रयाग करने के लिए दिये गये। उन्होंने प्रयोग करने से इन्कार कर दिया। उस पलटन के एक सिपाही मगल पाण्डे का फाँसी दे दी गई।

१० मई को मेरठ में तलवार, बन्दूक चल गई। अंग्रेजों को मार कर सिपाही दूसरे दिन दिल्ली पहुँच गए। वहाँ की फौजें भी उनमें मिल गईं। भारतीय फौज ने दिल्ली के लाल किले पर अधिकार कर लिया। बहादुरशाह को भारत का सम्राट् घोषित किया।

कानपुर में नाना को राज्याधिकार दिये गये। भौंसी में महारानी लक्ष्मीबाई ने कार्य सभाला। भौंसी का निबल समझ कर पहले नरथेखी तथा फिर सदाशिवराव नेवालकर ने आक्रमण करण पर शूरवीर रानी ने उन्हें पराजित कर भगा दिया। हुडाकू मगरसिंह को पकड़ कर रानी ने अपना स्वाभिभाक्त सेवक बना लिया। इस क्रान्ति की सूचना जब इंग्लैंड पहुँची तो जनरल ह्यूगज़ का दमन के लिए भारत में भेजा गया।

अस्तः—

जनरल ह्यूगज़ क्रान्ति का दमन करना आ रहा था। जब और अग्नि बरसाती हुई राज की सेना १२ मार्च सन् १८२७ को तालवहेट पहुँची। विप्लवकारी भाग गए और राज ने तालवहेट का किला सहज ही अधिकार में कर लिया। त्रिगाडियर स्टुअर्ट ने चन्देरी का पराजित किया। मऊ के दमन के लिए राज ने बानपुर विश्वाम के पश्चात एक दस्ता सीधा भेजा दिया था। उसने भौंसी पर चढ़ाई करने के पहले रानी लक्ष्मीबाई के पास समझाव भेजा। रानी युद्ध के लिए तैयार बैठी थी। राज भौंसी की ओर सावधानी से बढ़ा। रावसाहब और टोपे कालपी गये। तात्या सेना लेकर भौंसी आ रहा था, किन्तु राज ने उसे बीच में ही हरा दिया।

राहतगढ़ के भागे हुए लगभग पाँच सौ पठान रानी के शरणार्थी हुए। रानी ने उन्हें नौकर रख लिया। इनमें एक सरदार गुलमुहम्मद भी था। उन्होंने प्रश्न किया, "स्वराज्य के लिये रानी के चरणों में सिर दे दोगे।" भौंसी नगर के कोट पर सब फाटकों पर बड़ी-छोटी तोपों का उचित प्रबन्ध कर दिया गया, बारूद और गाले फाटकों की बुर्जों में इकट्ठे किए गए और निरन्तर युद्ध की सामग्री तथा रसद भेजने का प्रबन्ध कर दिया गया। दीवान दूल्हाजू आर्द्धा फाटक पर पीरअली सागर खिड़की पर, कुंवर खुदाबक्श सैयद फाटक पर, कुंवर सागरसिंह खन्डेराव फाटक पर, पूरन कारी उनाव

फाटक पर, नियुक्त किये गये। दीवान जवाहर सिंह के हाथ से सम्पूर्ण नगर और फाटकों को रक्षा का भार सौंपा गया। दाक्षिणी बर्ज की तोपें गुलाम गौसखा के संवाजन से, पूर्व और उत्तर की तोपें भाऊ बख्शी के हाथ से और पश्चिम की तोपें दीवान रघुनाथसिंह के अधिकार में दी गई।

धमासान युद्ध हुआ जो बहुत दिनों तक चलता रहा। रानी का जाम्बूम पीरअली राज से मिल गया और सारे गुप्त भेद शत्रु को बताता रहा, संयोग से दलराज की मानहानि हो गई। वह नाराज रहा और अवसर पाकर उसने विश्वासघात किया। भाँनी का ओछा फाटक खोल दिया। इससे अंग्रेज प्रविष्ट हो गए। भीषण मारकाट हुई। रानी लक्ष्मीबाई देशमुख, रघुनाथसिंह, जवाहरसिंह, पठान गुलामुद्दमद, मुन्दर आदि के साथ भाग कर कालपी पहुँची। रावसाहब और तात्या धरा थे। दूसरे दिन रानों की इनसे भेंट हुई। उनका इन्होंने बड़ा आदर सन्कार किया।

वहाँ फिर तैयारी प्रारम्भ हुई। कालपी अस्त व्यस्त था। रानी को जल्दी ही इस अस्त व्यस्तता का हाल मालूम हो गया। उन्होंने सेना के अनुशासन, कदायद-परेड और युद्ध सावर्णी इत्यादि प्रसंगों पर प्रश्न किए पर अन्ताराजनिक उत्तर मिले। ये सब व्यक्तिभग पीने तथा आमांश प्रसाद से मस्त्र रहते थे। कालपी की सेना का व्यवस्थित करने की याजनाएँ बनाई गई। २२ अप्रैल का राज ने कालपी पर चढ़ाई कर दी।

पेशवा की हार हुई। रानों की सम्मति से ग्वालियर पर आक्रमण किया गया। उस ज्ञान कर पेशवाई सेना ने हूप और गव से नगर में प्रवेश किया। पेशवा बड़े ठाट के साथ मौंगलिक बाख बजवाता हुआ मिथिया के राजमहल में पहुँचा और वहीं डेरा डाला लक्ष्मीबाई ने अपना शिविर नालखा बाग में रखा। पेशवा के साथी सरदार शहर के भिन्न २ महलों में जा उतरे। तात्या के दस्ते के लिए किले वालों ने फाटक खोल दिये।

उधर रोज की सूचना मिली कि बलबाई ग्वालियर की ओर बढ़ते आ रहे हैं। काली की जीत के उपरान्त ग्वालियर पर बढ़ा। पेशवा नाच रंग भग में मस्त रहा। राज की सेना में कुशल और अनुभवी सपाही थे। दो घन्टे की कड़ी लड़ाई के पश्चात् पेशवा की मुग़र वाली सेना को राज ने हरा दिया और मुग़र को अपने अधिकार में कर लिया। अब तो पेशवा तथा बाँदा नवाब किञ्चित् व्यथित हुए हा गये। रानी ने अपनी योजना विस्तार में तान्या का समझाई।

१७ जून को सबेरे ब्रिगेडियर मिथ ने युद्ध की विगुल बजाया समाप्तान युद्ध हुआ। रानी लक्ष्मीबाई तथा उसकी लालकुर्ती के सवारों ने छापारा मारा। रानी उस दिन विजयी रहीं। दूसरे दिन अंग्रेज जनरल सावधान हो गए और उधर सवारों को कई दिशाओं से आक्रमण की योजना बनाई। रानी लक्ष्मीबाई प्रचण्ड वेग से लड़ी किन्तु अन्त में मुन्दर, रतुनाथसिंह, देशमुख और गुल मुहम्मद आदि के संग भाग निकली। अंग्रेज सैनिकों ने पीछा किया। एक स्थान पर एक जाला था। घाड़ा प्रड़ गया। यहाँ भी थोड़ा सा युद्ध हुआ जिसमें रानी घायल हो गई और बाबा गंगादास की कुटी के समीप स्वर्गवासी हुईं। अन्त तक भवराज्य की भावना उनके हृदय में विराजमान रही।

कथानक की विशेषताएँ

वस्तु विक्रम में पटुता—

इस उपन्यास के कथानक ने प्रबन्ध-पटुता उपलब्ध है। बर्मा जी ने समस्त ऐतिहासिक अनुसन्धानों को दृष्टि में रखकर एक कथानक का निर्माण किया है। रानी लक्ष्मीबाई इसका केन्द्र हैं। उदय भाग में रानी का बाल्यावस्था तथा देश में व्याप्त अज्ञान और परतन्त्रता का अन्धकार वर्णित है। इस अन्धकार में मनु रूपी सूर्य का उदय होना है। जनता में धीरे धीरे अपने अधिकारों के प्राति जागरूकता आती है। मध्याह्न भाग में यह सूर्य अपनी सम्पूर्ण आभा से चमक कर देशवासियों को स्वराज्य के लिए प्रेरित करता

है। प्रत्येक प्रकार की अन्तर बाह्य प्रतिकूल परिस्थितियों में रानी का चरित्र रूपी स्वर्ण तपता है। अंग्रेजों से प्रतिगोध बढ़ता चलता है। “अन्त” में युद्ध के पश्चात् रानी स्वर्ण मिथार जाती है। “नैनं छिन्दन्ति शस्त्रानि नैनं दहति पावकः” का पाठ करती हुई वे स्वराज्य की नींव का एक पत्थर बन जाती है।

सम्पूर्ण कथानक रानी के चरित्र तथा विकास के साथ विकसित होता चलता है। रानी लक्ष्मीबाई का चरित्र ही इस उपन्यास की मूलभूति है। अधिकांश घटनाएँ उन्हीं में सम्बन्धित हैं। प्रबन्धकार की पटुता घटनाओं की शृङ्खलाओं में देखी जा सकती है। अप्रासंगिक घटनाओं को थोड़ा थोड़ा स्पर्श करता हुआ लेखक भाँसी की रानी के चरित्र विकास को नहीं भूलता। वह भिन्न-भिन्न कथा सूत्रों को सावधानी से सम्हालता चलता है।

२. असम्बद्ध घटनाएँ तथा उनका मूल कथानक से योग—

वर्मा जी ने मूल कथानक के साथ छोटी छोटी और प्रासंगिक कथाएँ भी ले ली हैं, जिनमें रोमांटिक स्पश आते हैं, देश काल की परिस्थिति का निर्णय हो जाता है, और थोड़ा देर के लिए हमारा ध्यान मूल कथानक से कुछ दूर हट जाता है।

इन कथाओं में (१) मोतीबाई, खुदावक्श, (२) मुन्दर, रघुनाथमिह, (३) जुडी-तात्या टोपे, (४) नारायण शास्त्री-छोटी, (५) पूरन भलकारी मुख्य हैं। ये मूल कथानक के साथ चलते रहते हैं। कहीं-कहीं उपन्यासकार इनमें से किसी को उभार कर हमारा ध्यान आकृष्ट कर देता है, पर वह अपने मूल कथानक पर ही आ जाता है नारायण शास्त्री और छोटी तक को मूल कथानक में मिला दिया गया है। राजा गंगाधरराव सजा देते हैं। इससे तत्कालीन कटरता स्पष्ट हो जाती है।

पजनेश और नारायण शास्त्री की मित्रता दिखाकर लेखक ने पजनेश को भी सम्बद्ध कर दिया है। शास्त्री और पजनेश दोनों

रमिक हैं। इसलिये कट्टर पन्थियों के प्रतिकूल है। उस काल में फैले हुए तरह-तरह के मत मतान्तरों को इस माध्यम से अभिव्यक्त कर दिया गया है। मोती, खुदावक्श, मुन्दर, रघुनाथ, जुही, तात्या आदर्श प्रेमियों के उदाहरण हैं, जो इस वीर-रस के उपन्यास को रोमांटिक वातावरण में परिपूर्ण कर देते हैं। पूरन-भलकारी आदर्श दम्पति हैं। इनसे हर प्रकार के पात्र हमें मिल जाते हैं।

३—रोचकता और कुतूहल

सफल उपन्यास के कथानक के ये दो गुण इस उपन्यास के कथानक में वर्तमान हैं। लेखक कहानी कहने की कल में प्रवीण हैं। दृश्यों को पुनः पुनः परिवर्तित कर लेखक ने रोचकता का ध्यान रखा है। यदि मध्य में रोमांटिक स्पर्श न होते तो सम्भव था, कथानक में शुष्कता आ जाती किन्तु वर्मा जी ने प्रबन्ध की गठन शीलता के साथ वस्तु-विकास में रोचकता का सम्मिश्रण किया है।

पाठक यह जानने को उत्सुक रहता है कि आगे क्या आने वाला है। घटनास्थल पर क्या होगा? दुर्भाग्य के बादलों से रानी की कैसे रक्षा होगी? फिर, जब वह रानी को बचते देखता है, तो हृदय में प्रसन्न होता है। यद्यपि वातावरण मृष्टि के लिए ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को स्पष्ट करना आवश्यक हो गया है, तथापि पात्रों में व्यक्तिगत गुण डाल कर रोचकता उत्पन्न कर दी गई है।

युद्धों के दृश्यों में कौतूहल का निर्वाह बड़ी सफलता के साथ हुआ है। आवेश और उत्तेजना में हम भयंकर युद्ध देखते हैं, अन्दर ही अन्दर भयभीत होते रहते हैं। अनेक बार हमारी आशाएँ ठीक निकलती हैं, पर कई बार कुछ नवीन बात हो जाती है। आशा निराशा का यह द्वन्द्व निरन्तर चलता रहता है। वीर रस का बड़ा सुंदर निर्वाह हुआ है।

चरित्र चित्रण

पात्रीकों वर्मा जी ने सर्वाधिक सहता, स्थान और ऐतिहासिक प्रमाण कता प्रदान की है। लक्ष्मीबाई अधिकांश घटनाओं का केन्द्र हैं। उनकी आन्तरिक एवं बाह्य वृत्तियों पर पर्याप्त प्रकाश डाला गया है। उन्हें हर प्रकार से आदर्श वीर भारतीय नारी के रूप में उपस्थित किया गया है।

उनका बाल्यकाल

बचपन में मनु को गुवमोचित कार्यों की आरम्भ थी। नाना और गाव साइव के साथ रहने के कारण उन्हें युवकों के व्यायाम, कुश्ती, मलखम्ब, अश्वारोहण, शस्त्र संचालन की आरम्भ हो गई थी। उनका शरीर पुष्ट था। छोटी माटी चोट की बे परवाह न करती थी। उन्हें देश की स्वार्थानता के प्रति प्रारम्भ में ही दिल-चस्पी थी। वीर पुरुष एवं नारियों की वीर गाथाएँ सुन सुन कर उनमें साहस, बल, निर्भयता, बड़ना और वीरता के सद्गुणों का विकास हो गया था। वे आलस्य में सदा दूर रहती थीं, चंचलता, चपलता, स्फूर्ति और मनु उद्योग के लिए हठ उनके प्रधान गुण थे। चंचल होने पर भी विचारशील और गम्भीर थी। बचपन में ही वे देश तथा समाज के गम्भीर प्रश्नों पर विचार किया करती थी। उनकी बुद्धि उनकी अवस्था से बहुत आगे निकल चुकी थी। मनु इतनी सुन्दर थी कि छुटपन में बाजीराव इत्यादि उन्हें “छवीली” के नाम से पुकारते थे। मनु और नाना के तीन भाई साथ खेलते, खाते, और पढ़ते थे। मलखम्ब, कुश्ती, तलवार बन्दूक का चलाना आश्वारोहण, पढ़ना लिखना इत्यादि—सब इन तीनों ने छुटपन में साथ साथ सीखा था। सबसे मनु चपल, हठी और बहुत पैंनी बुद्धि की थी। आयु कम होने पर भी वह इन हुनरों में उन बालकों से आगे निकल चुकी थी। स्त्रियों की सगति कम प्राप्त होने के कारण वह लाज मंकाच की दमन और भिन्नक से दूर हटती गई थी। छत्रपति शिवाजी, प्रताप इत्यादि के पुरातन आख्यानों ने मनु के

कल्पना को एक अस्पष्ट और अदम्य गुदगुदी दे रहीं थी। वह सुन्दर स्वस्थ, वीर, कुशाग्र कन्या थी।

उनका दाम्पत्य जीवन

विवाह के उपरान्त उनका नाम रानी लक्ष्मीबाई हो गया। वे अब भी स्त्रियों को सवारी, शास्त्र प्रयोग, मलखम्ब, कुश्ती आदि का अभ्यास कराती थीं। बचे हुए समय से धार्मिक ग्रन्थों का अध्ययन किया करती थी। भगवद् गीता पर उनकी परम श्रद्धा थी। चपलता के स्थान पर अब गम्भीरता, वाचालता के स्थान पर समय आ गया। क्रोध हो जाने की वृत्ति भी उत्पन्न हो गई थी। व्यग्न करने की इच्छा अवश्य कुछ बढ़ती पर थी, परन्तु वह सहज, सरल भव्य, अन्य मुसकान सदा साथ रही और चित्त की दृढ़ता भी बढ़ती गई। दया, करुणा, अहिंसा, विनाद आदि सद्भाव उनमें विकास पर थे।

स्वराज्य स्थापना की ओर उनकी प्रवृत्ति बढ़ती जा रही थी। नाच रंग नाटक शाला की ओर कोई खाम साच नहीं थी। उन्हें शृङ्गार रस की कविताओं से उन्हें घृणा था। गंगाधर राव की, खुशामद की नाति, श्रंगार रस की कविता को प्राप्तादन देना उन्हें अच्छा नहीं लगता था। कल्पना के मुनहरे पर थोथे जगत में रहने की अपेक्षा वे ठोस कार्य को पसन्द करती थी। वह उन जानों से दिलचस्पी रखती थी, जिनमें सार हो। धीरे-धीरे उन्होंने राज्य का प्रबन्ध और मद्रकमों की सुव्यवस्था करना सीखा और बहुत सा राज्य का कार्य सम्हाल लिया। रानी की विलग्नता बुद्धि एवं प्रतिभा का आभास पाकर विस्मय हुआ। अल्प आयु में उनका आचार विचार आश्चर्य उत्पन्न करने वाली परिपक्वता का सा प्रतीत होता था। उस युग की कन्याये जिन आयु में खेलना, खाना, पहिनना, आदना ही सब कुछ समझती होगी, उस आयु में लक्ष्मीबाई गम्भीरतर होती चली गईं। छुटपन की मनु, लक्ष्मीबाई के विशाल आदर्शों में विलीन हो गई। सुन्दर सुन्दर और काशीबाई सदा उनके साथ रहती थीं।

आयु में अधिक शृंगार प्रिय, दुर्बल, विलासी और क्रूर पति पाकर भी वे पतिव्रता रहीं, निरन्तर पति को सम्मार्ग की ओर प्रेरित करती रहीं। पति के रूप में उनमें रमणी सुलभ कामलता, भावुकता, भारतीय सयादापालन, आदर्श एवं व्यवहार का समन्वय था। अपने पुत्र को वे बहुत प्रेम करती थीं। गोद लिए हुए पुत्र को रण में भी अपने साथ लिए रहीं। पुरानी जीर्ण-क्षीर्ण सामाजिक रूढ़ियों, ढोंग, आदम्बर में उन्हें घृणा थी वे नारी जागरण के लिए निरन्तर सचेष्ट रहती थीं।

रानी का धार्मिक जीवन

वे धर्म और आध्यात्म में विशेष रुचि रखती थीं। गीता का स्वाध्याय उनके नित्य कर्म का एक प्रधान अङ्ग था। उनका जीवन गीता में वर्णित कर्मयोगी का जीवन था। प्रगाढ़ धार्मिकता, उदारता, करुणा, प्रेम, और आत्म भाव उनमें कूट कूटकर भरे हुए थे। वे शिव और कृष्ण की अनन्य उपासिका थीं। एक ओर विनोद शीलता, तो दूसरी ओर उनमें गम्भीर दार्शनिकता का पुट था। उनका अन्तर बहुत कामल और उदार था।

पति का देहान्त हो जाने के उपरान्त उनका जीवन धार्मिकता और पूजा में और भी परिपूर्ण हो गया था। विधवा जीवन में वे नित्य प्रातःकाल ४ बजे स्नान कर ८ बजे तक महादेव का पूजन करती थीं और उसी समय गर्वये उन्हें भजन इत्यादि सुनाते थे। ११ बजे के उपरान्त रानी फिर स्नान करतीं और भूखों को खिला कर तथा कुछ दान धर्म करके तब भोजन करतीं फिर तीन बजे तक ग्यारह सौ राम नाम लिखकर आटे की गोलियां मछलियों का खिलातीं। उस समय वे किसी गूढ़ चिन्ता, किसी गूढ़ विचार में निमग्न रहती थीं सन्ध्या के उपरान्त ८ बजे तक कथावार्ता, पुराण, भगवद्गीता का १८ वाँ अध्याय और भजन सुनतीं।

कठार संघर्षों तथा युद्धों में भी भजन पूजन उनका नित्य का

कम रहा। भांगी की सब औरतें सदा पूजन के लिए उनके इर्द गिर्द एकत्रित रहती थीं।

घनघोर युद्ध में धर्म उनका धैर्य बन जाता था। युद्ध की रातों में भी वे मन्दिर में जाकर महादेव की प्रार्थना करती थीं। स्वप्न में उन्हें भारत माता का ध्यान रहता था। गृहस्थी में रह कर भी वे वैराग्य भाव रखती थीं। वे अन्ततः सती, साध्वी, पति परायण भारतीय ललना का आदर्श बनी रहीं।

वीर क्षत्राणी और कुशल सेनानी

रानी लक्ष्मीबाई के चरित्र का सबसे उज्ज्वल पहलू एक राज नैतिक क्रान्तिकारी का है। उनका हृदय देश की गुलामी, जनता की जड़ता, मूर्खता विलासिता और शैथिल्य देख कर अत्यन्त दुखी होता था। वे अंग्रेजों की साम्राज्यवादी नीति देख कर उत्तेजित हो उठती थीं। वे राजनीति और राजनीति के समीकरण में विश्वास करती थीं। उनका हृदय देश प्रेम से परिपूर्ण था। वे भारतीय सभ्यता, सभ्यता शास्त्र कलाएँ सुरक्षित रखने और उन पर आचरण करने में विश्वास रखती थीं।

देश व्यापी स्वतन्त्रता संग्राम की याचना बनाना साहस और वीरता में उसका नेतृत्व करना अनेक युद्ध एवं प्रतिकूलताएँ सहन कर लड़ते २ मर जाना उन्हें स्वराज्य की नींव का एक पत्थर बनाती है। वे राजनीति में कुशल थीं। वे जानती थीं कि अंग्रेज जाति बहुत धूर्त है। उसका सामना चाणक्य नीति से होना चाहिए व्यवहार कुशलता, नीति समानता, आपदधर्म, उत्कट प्रेम उनके रोम रोम में भरा था।

युद्ध में उन्होंने अपना क्षत्राणी और कुशल सेनानी का रूप दिखाया। वे युद्ध विद्या में इतनी निपुण थीं कि स्त्री होते हुए पुरुषों से हाड़ लेती थीं। उनके वचन सुनकर, सेना में नव स्फूर्ति, साहस, धैर्य और वीर-भाव का संचार हो उठता था। सगरसिंह जैसे डाकू

का पकड़ कर अपने आज और पराक्रम से प्रभावित कर लेना उनके शौर्य का प्रतीक था।

वे सदैव सतक एवं नागरुक रहीं। आगम या विलास से उन्हें अरुचि थी। किले पर नव मौत बरस रही थी, वे धैर्यपूर्वक सन् मोर्चे का निराकरण कर रहीं थी। वे ऐसी कुशल सेनानी थीं कि दो बार उन्होंने शत्रु को भार भगाया था। नाना मोपटकर के सम्मुख उन्होंने प्रण किया था—

“मैं लड़ूंगी। आज सब के सामने प्रण करता हूँ कि यदि समस्त अंग्रेजों का मुझे आसना करना पड़े, तो बरूँगी।”

रानी आदर की भूखी न थी, वे निरन्तर ठोस और खरे काम से विश्वास करती थीं। कालपी से आकर उन्होंने वहाँ के सैनिकों को सुव्यवस्थित किया, सज्जन मजबूत किया और किसानों, पेशवा से नव-जीवन संचार किया। कौच के दरबार में राव साहब के पेशवा रानी के चरित्र पर प्रकाश डालते हैं—

“आपने भौंसी से अंग्रेजों जैसा करारा मुकाबला किया, वह अवर्णनीय है। कौच से हमारी सेना और युद्ध सामग्री की लूट कर ले आने से आपका बहुत बड़ा हिस्सा है। आप सरीखा निपुण सेनापति शायद ही काँड़ें हों।

रानी बोली—“कौच की लड़ाई से आपका प्रबन्ध बहुत रद्दी था। सेना में कोई व्यवस्था नहीं है। अंग्रेजी सेना अपनी व्यवस्था के कारण ही विजय प्राप्त करती है। हमारे सैनिक शूरीर और पराक्रम से अंग्रेजों से बड़े चढ़े हैं, परन्तु व्यवस्था और दूरदर्शी योजना की कमी के कारण उनका शौर्य विफल हो जाता है। जब तक आप अपनी सेना का अच्छा प्रबन्ध नहीं करेंगे और समय से काम नहीं लेंगे, युद्ध में यश प्राप्त नहीं होगा।” रानी ने जो योजना बनाई उसी के अनुसार मार्च बनाए गए, तोपें रखी गईं, गोलन्दाज नियुक्त और सरदार विभक्त किए गए। इससे उनकी कुशाग्र बुद्धि, युद्ध सम्बन्धी ज्ञान, लोक प्रियता एवं अनुभव स्पष्ट हो जाता है।

गानियों को दहेज में दासियाँ मिलने की प्रथा थी। अनेक दासियाँ राजा के विलास की सामग्री बनी रहती थीं, या जीवन के स्वाभाविक मार्ग पर जाकर सहल में प्रथक हो जाती थीं। पर्दा प्रथा गेरे २ टूट रही थी। उच्च वर्ग में नाचने गाने और अभिनय का प्रचार था। हरदी कूँ कूँ का उत्सव बड़ी सज्जधज में मनाया जाता था। किले में सब जातियों के व्यक्तियों को जाने की आजादी थी। कोरी और कुम्हार अब्बूत नहीं समझे जाते थे। हिन्दू मुसलमानों में एकता थी व्यापार अच्छा चलता था। शहरों में चहल पहल मची रहती थी, धन धान्य खूब था, स्त्री पुरुष सुखी दिखलाई पड़ते थे।

प्रकृति चित्रण :—

बर्मा जी ने उल्लसित प्रकृति के बड़े मर्म स्पर्शी वर्णन इस उपन्यास में यत्र तत्र जड़ दिये हैं। व्यक्तिगत परिचय एवं प्रकृति से निकट साहचर्य होने के कारण प्रकृति के उन चित्रों में सजीवता एवं सचाई है। राज घराने में सम्बन्धित होने के कारण इस उपन्यास में प्रकृति चित्रण को वह प्रमुखता प्राप्त नहीं हो सकी है, जो “मृग-नयनी” में मिली है, तथापि जहाँ कहीं उन्हें अवसर प्राप्त हुआ प्राकृतिक पृष्ठभूमि का उपयोगी किया गया है। “रत्नावली” नाटिका के अभिनय से पूर्व प्रकृति का सादक साहक एक शब्द-चित्र देखिये,—

“चैत लग गया था। बसन्त ने पत्थरों और कंकड़ों तक पर फुलवाड़ियाँ पसार दीं। टेम्बू के फूलों ने जितनी को सजा दिया और धरती का रंग विरंगे चौक पूर दिये। समीर और प्रभजन में भी महक समा गई। रात और दिन संगीत में पुलकित हो उठे।”

हरदी कूँ कूँ के उत्सव के आगमन से पूर्व का प्राकृतिक चित्रण संक्षिप्त पर रंगीन है:—

“बसन्त आया। प्रकृति ने पुष्पाञ्जलियाँ चढ़ाई। महकें

बरसाईं । लोगो को अपनी श्वास तक में परिमल आभास हुआ ।
किले के महल में रानी ने चैत्र की नवरात्र में गौर की प्रतिमा की
स्थापना की ।”

— पृष्ठ ६५

अलंकारों के रूप में कहीं २ प्रकृति का उपयोग हुआ है ।
जैसे—

“फूल सदा नहीं खिलते । उनमें सुगन्धि भी सदा नहीं रहती ।
उनकी स्मृति ही सदा मन में बसती है । नृत्य और गान की भी
स्मृति सुखदायक हाती है । परन्तु इन सब स्मृतियों का पापक यह
शरीर और इसके भीतर आत्मा है ।”

“रानी हँस पड़ीं, जैसे संध्या के पीले बादलों में दामिनी
दमक गई ।”

रात्रि के वर्णन में भयानकता का सौंदर्य देखिए:—

“फरवरी हो चुकी थी । चाँदनी डूब चुकी थी । रात बिल्कुल
अधेरी, हवा ठन्डी और मन्द । तारे दमक रहे थे कुछ कुछ बड़े
असंख्य छोटे छोटे जैसे चाँदनी चादर दितरा कर छोड़ गई हो ।
नोचे मघन अधकार सब दिशाओं में गुलाई सी बाँधे हुए । भाँगुर
भँकार रहे थे ।”

—पृष्ठ २४६

बेतवा नदी का चित्र देखिए कितना सजीव और सफल
विचा है । इसमें उपन्यासकार का सूक्ष्म निरीक्षण दर्शनीय है । ऐसा
चित्र वही खींच सकता है, जिमने तूफानी नदी को पार करने का
अनुभव किया हो ।—

“बेतवा की धार पुँज के ऊपर पुँज दिखाई पड़ती थी । क्रम
अभग और अन्त सा । जब एक क्षण में ही अनेक बार एक जल पुँज
दूसरे से संघर्ष खाता और एक दूसरे से, आगे जाने का अनवरत,
पथक अटूट प्रयास करता तब इतना फेनिल हो जाता कि सारी नदी
में फेन ही फेन दिखाई पड़ता था । भाग की इतनी बड़ी निरन्तर
वहती और उत्पन्न होती हुई राशियाँ आड़े आ जाती थीं कि

घुड़सवारों को सामने का किनारा नहीं दिखलाई पड़ पाता था ।

(देखिए पृष्ठ २२)

“भाँसी की रानी लक्ष्मीबाई” जैसे राजनैतिक उपन्यास में बी. वर्मा जी ने यथा संभव उल्लासपूर्ण या परिस्थिति के अनुसार नैराश्य, पूर्ण या भयानक प्रवृत्ति वर्णन किए हैं। इनमें वातावरण सज्जेव और मन्चा बन गया है, बुन्देलखण्ड के जंगल नदिये, वृक्ष और फूल सजीव हो कर हमारे सामने आ खड़े हुए हैं। सहज स्वाभाविकता और प्रमाणिकता इन वर्णनों की प्रमुख विशेषताएँ ।

श्री “श्याम” जाशी एस० ए० के शब्दों में, इन वर्णनों को हम गद्यकाव्य या चित्रकाव्य भी कहदे तो अत्युक्ति नहीं। ऐसे चित्रों के दो ही उपयोग हैं—एक तो इनमें वातावरण निर्माण में सहायता मिलती है, दूसरे वे रचना को हृदयग्राही और मधुर बना देते हैं। वर्मा जी ने इतिहास की काली रेखाओं के बीच वातावरण के सुनहरी चटकीले रंग भर कर कवित्व द्वारा उसमें प्राण प्रतिष्ठा भी कर दी है, जिसमें उपन्यास सजीव हो उठा है।”

मुख्य समस्याएँ

“भाँसी की रानी” ऐतिहासिक उपन्यास है तथा राजनैतिक परिस्थिति का सच्चा चित्र उपस्थिति कर देना उपन्यासकार का उद्देश्य है। फिर भी अप्रत्यक्ष रूप में उसने अनेक छाटी बड़ी समस्याओं की ओर निर्देश कर अपने विचार प्रकट किये हैं। वर्मा जी इस बात के लिये सतर्क रहे हैं कि कहीं विभिन्न विषयों या समस्याओं के प्रति पादत्र से वे अपने उपन्यास को रौचकता एवं सजीवता नष्ट न कर दें।

(१) स्वाधीनता के लिए भारतीयों का प्रथम योजनावद्ध संघर्ष

उपन्यास में राजनीति को महत्ता देने का तात्पर्य यह है कि वर्माजी ने भारत निवासियों का अंग्रेजी सत्ता के विरुद्ध प्रथम क्रान्तिकारी प्रयास स्पष्ट किया है। १८५७ की क्रान्ति क्यों हुई?

उसके पीछे जनता की क्या क्या भावनाएँ थीं ? अंग्रेजों के विरुद्ध घृणा और क्रान्ति की उवालाएँ कैसे धीरे धीरे फैलती जा रही थी ? हिन्दू मुस्लिम एकता का क्या हाल था ? राजी के नेतृत्व में भारतीय जनता ने कैसे आजादी लेने का प्रयत्न किया ? इन सभी तत्त्वों पर प्रकाश डाला गया है । इसके साथ ही, भारत में अपना राज्य प्रचार, अर्थ सचय, धर्म का प्रचार आदि क्या-क्या बातें अंग्रेज चाहते थे, यह भी स्पष्ट किया गया है ।

यह क्रान्ति क्यों असफल रही ? उस प्रश्न पर विचार करने करते बर्मा जी ने भारतीयों की पारस्परिक फूट, विलास प्रियता, असहन, और धार्मिक संकुचितता का भी स्पष्टीकरण कर दिया है ।

(२) अंग्रेजों की योजना—

बर्मा जी ने विदेशियों के दृष्टि कोण को स्पष्ट करने का पूर्ण प्रयत्न किया है । वे हिन्दुस्तान में अपना राज्य और धर्म विस्तार करना चाहते थे । उन्हें रुपया चाहिए था । इण्डिया कम्पनी एक व्यापारिक कम्पनी थी । वह अर्थ लोलुप थी । अतः देशी राजा एवं नवाबों से अधिक से अधिक रुपया पेंठना, उनके राज्य को अंग्रेजी राज्य में सम्मिलित करना, उनकी कुटनीति के अंग थे । उनके हृदय में भारतीयों के प्रति घृणा थी । वे यहाँ की सभ्यता संस्कृति, धर्म, साहित्य, कला, संगीत सब निकृष्ट कोटि का समझते थे । कुछ अंग्रेजों के बक्तव्य इस मनोवृत्ति के सूचक हैं :—

“डनलप—(सिपाहियों से) तुम्हारे देवी देवता सब बद-सूरत और व्यर्थ हैं । उन पर विश्वास करने के कारण तुम मूर्ख बने हुए हो । इसलिए तुम्हारी तरक्की नहीं हो पाती । ईसाई होते हुए भी तुमको एक ईश्वर और उसके एक पुत्र पर ही विश्वास लाने की जरूरत है । दुनियाँ भर की डाकिनी पिशाचिनी और भूत प्रेतों से पीछा छूट जायेगा । हिन्दू मुसलमान सब बेबकूफ हो । डञ्जील पढ़ो आँखें खुल जावेंगी ।”

सन् १८४६ में ईस्ट इण्डिया कम्पनी के वर्गधार भारतवर्ष भर को ईसाई बनाने का स्वप्न देखने लगे थे। अस्पृश्य चर्ची वाले कारतूसों की वास्तविकता को स्वयं कटु जिस्मेदार लेखकों ने स्वीकार किया है। कम्पनी के बोर्ड के सदस्य उस स्वर्ण घड़ी की प्रतीक्षा थे। जब समय हिन्दुस्तान—हिन्दू और मुसलमान अपने धर्म का झाड़कर कम्पनी के ईसाई धर्म को स्वीकार कर लेंगे। ईसाई धर्म के प्रचार के लिए काफी रकम पृथक् रख दी गई थी।

दूसरी ओर अंग्रेजों के आतंक, घृणा, शोषण, साम्राज्य-लालुपता, धार्मिक उत्साह से तंग आकर हिन्दुस्तानी लोग नाना साहब, नान्या, बहादुरशाह, अवध की बेगम जीनत महल और रानी लक्ष्मीबाई की भारत स्वार्थीनता योजना को सफल बनाने में लगे थे।

अंग्रेजों ने अपनी भाषा एवं संस्कृति के व्यापक प्रचार के लिये स्कूल खोले, नौकरियों के लिये अंग्रेजी लिखने वाले कर्क भारतीय मस्तिष्क में गुलामी की वृत्ति उत्पन्न की।

परपकार की वृत्ति से प्रेरित होकर अङ्ग्रेजों ने कानून की प्राण प्रतिष्ठा हिन्दुस्तान में नहीं की थी। वे चाहते थे कि देश में पूर्ण शान्ति हो, उनका अधिकार हमेशा बना रहे, व्यवसाय निर्बाध चलते रहे सब कायदे कानून में बाँध कर अपना अपना काम करने चले जायें। अनुशासन में शिथिलता न आये पाये। सभी अंग्रेजी राज्य निर्विघ्न चल सकता है उन लोगों ने हिन्दू-नरेशों और मुसलमानों के उत्थान-पतन के इतिहास पढ़े गुने थे इसलिये वे अपने शासन को उन सब गड़ों से बचाना चाहते थे, जिनमें नरेशों और बादशाहों के सूबेदार और अन्य कर्मचारी मौका पाते ही उन्हें ढकेल दिया करते थे।

३—भारतीय क्रान्ति के असफल होने के कारण—

वीर और समृद्ध होते हुए भी विदेशियों द्वारा भारत में

हिन्दुस्तानी को पराजित हुए ? बर्मा जी ने अप्रत्यक्ष रूप से इसका भी यत्र-तत्र संकेत कर दिया है। इसका मूल कारण पारम्परिक फूट और समय पर अपने समीप के राजा को उचित सहायता प्रदान न करना था। भारत का यह दुर्भाग्य रहा है कि यहाँ जब एक राजा नबाब पर मुनीबत आई तो दूसरा उसकी सहायता करने के स्थान पर दूर बैठ कर तमाशा देखता और यह सोचता रहा कि यह सँकट उस तक न आवेगा। अफ़ले-अफ़ले यह कर हम विदेशियों द्वारा निरन्तर पराजित होते रहे हैं।

राज्य क्रान्ति में भी कई राज्य, (जैसे ग्वालियर, हैदराबाद) अंग्रेजों से मिले रहे, रुपये सेना, तथा सिपाहियों द्वारा सहायता प्रदान करते रहे। इस फूट से विपत्तियों ने एक एक कर हमें पराजित कर डाला। यदि सब मिलजुल मगठति होकर उनमें मुकाबला करते, तो अवश्य सफल होते।

विलासिता, देशी गियासतों के अत्याचार और अपनी पचायतों का न रहना—हमारी अशक्तता के कारण बने। देशी राजा अपनी वामजा तृप्ति में ही मस्त रहे और उनके अत्याचार बढ़ते रहे। अंग्रेजों ने हिन्दुस्तानियों के हृदय में गियासती शासन के प्रति घृणा और अपनी न्याय व्यवस्था के प्रति आकर्षण उत्पन्न किया।

स्वयं रानी की फौज में पीरअली और दूल्हाजू जैसे विश्वासघाती व्यक्ति थे, जो पराजय का कारण बने। हमारे राजा और नबाब अपने अभिमान में मस्त बने रहे।

४ — जाति बिरादरी की सँकुचितता —

बर्मा जी ने इस उपन्यास में जहाँ राजा गंगाधर राव के अत्याचार और क्रोध से चित्रित किये हैं, वह जाति बिरादरी की कट्टरता, सँकुचितता और अत्याचारों का भी चित्रण किया है। कुछ निम्न जाति वाले जनेऊ धारण कर लेते हैं। इस पर उच्च वर्ण भगड़ा खड़ा कर लेते हैं। मामला भयानक होकर गंगाधर राव के

पास पहुँचना है। जाति और धर्म का भगड़ा था और राजा को इसमें हस्तक्षेप न करना चाहिये था किन्तु राजा ने दम्बल देने की ठानी। जनेऊ पहनने वालों ने कहा कि “ब्राह्मणों के अलावा भी अनेक जातियाँ जनेऊ पहनती हैं इसलिये उन्हें भी आज्ञा प्राप्त होनी चाहिये।” राजा ने इस न्यायोचित माँग को अनुचित समझा और दण्ड दिया गया।

उपन्यासकार ने इस अन्याचार के प्रति घृणा उत्पन्न की है। हम पढ़ते-२ स्वयं जाति पॉति की कट्टरता पर क्रोध हो उठते हैं। सबर्णों के निम्न वर्गों पर अन्याचार स्पष्ट हो जाते हैं। जाति पॉति ने हिन्दुओं का छोटे छोटे सहस्रों टुकड़ों में बाँट रखा है, जिनका खान पान और व्याह शादी में उतना भी सम्बन्ध नहीं है जितना चिड़िया घर के पशु पक्षियों का आपस में होता है। जाति पॉति के कारण हम सदा अपनों को पराया बनाते आये हैं। देश में द्विजों ने शूद्रों के प्रति जो अन्याचार किये हैं, वे उपन्यासकार ने उभार दिये हैं।

५--अन्तर्जातीय विवाहों का पक्ष —

‘मृगनयनी तथा ‘भौंसी की रानी’ दोनों में अन्तर्जातीय विवाह के पक्ष में सकेत मिलते हैं। गूजर कन्या निन्नी का विवाह राजा मानसिंह से और लाखी अटल अहीर-गूजर का विवाह सम्बन्ध होता है। राजा को तो कोई कुछ नहीं कहता पर जाति वालों की हृदय हीनता और अत्याचारों के कारण अटल और लाखी गाँव छोड़ कर चले जाते हैं और बड़ी मुसीबत सहते हैं। ‘भौंसी की रानी’ में नारायण शास्त्री और छोटी का सम्बन्ध इसी प्रकार का है। वे जाति की कठोरता का शिकार बनते हैं, पर रहते हैं प्रसन्न और सुखी। पुरानी बातों पर अड़ना और उपयोगी नई योजना से डरना—ये राष्ट्र के लिये अहित कर है। जाति पॉति तोड़कर समता और बन्धुता उत्पन्न होनी चाहिये।

शैली-भाषा-रस—

इस उपन्यास का ऐसी सरल एवं प्रवाहमयी शैली में लिखा गया है कि तत्कालीन कला, संस्कृत, संभ्यतः, आर्थिक एवं राजनैतिक पृष्ठभूमि सभी जैसे हमारे सामने खड़ी हो जाती है। इतिहास के प्रति इतना वफादारी और साथ ही सरसता, कलान्यकता और कौतूहल—ये कठिनता से एक साथ मिलते हैं।

बर्मा जी ने घटनाओं का नियोजन इस ढंग में किया है कि ऐतिहासिक पृष्ठभूमि भी हमारे मन पर स्पष्टता से अंकित हो जाता है और कहानी का भी अबाध आनन्द आना रहता है।

जहाँ इतिहास के स्थल आते हैं (जैसे पृष्ठ १७६, पृष्ठ ३२७) वहाँ उपन्यासकार विस्तार से पृष्ठभूमि निर्माण में सलग्न हो जाते हैं। कथा की धारा कुछ नीग हो जाती है, पर ऐसे स्थल अधिक नहीं हैं। इसमें शुष्कता नहीं है। थोड़ी दूर चल कर फिर आनन्द आने लगता है। पाठक गानों के चारित्र्य सम्बन्धी घटनाओं में पुनः तन्मय हो जाते हैं। इतिहास की अपेक्षा इसमें उपन्यासमय प्रचुरता में विद्यमान है।

ऐतिहासिक उपन्यासों में प्रायः लेखक कल्पना और भावना के स्पर्श से पात्रों को तोड़ भंगोड़ डालते हैं, घटनाओं का काल इत्यादि समझ में नहीं आता। बर्मा जी का यह उपन्यास इस त्रुटि से सर्वथा मुक्त है। गनी लक्ष्मीबाई, राजा गंगावर राव, मांतीबाई, तात्या, नवाब अलीवहादुर, ज़ही, दुर्गा, मुगलखौं आदि सब पात्र ऐतिहासिक हैं।

बर्मा जी की भाषा सरल स्वभाविक है। उसमें सरसता पर्याप्त मात्रा में विद्यमान है। कथापकथन की शैली से पात्र अपने मन्तव्यों को स्पष्टता से कह सकें हैं। भावों का प्रगट करने के लिए उपयुक्त शब्दों का चयन किया गया है। कहीं २ स्थानीय बुन्देलखण्डी

भाषा का बड़ा स्वभाविक प्रयोग किया है। कहां-कहीं अलंकारों की अपूर्व छटा है।

यह उपन्यास वीर रस से ओत प्रोत है। स्वाधीनता संग्राम की अमर सेनानी रानी लक्ष्मीबाई का नाम सुनते ही नसें फड़क उठती हैं, हृदय में साहस और वीरता का सञ्चार हो उठता है। वर्माजी ने भारतीय; क्रान्ति को ऐसे सुन्दर रूप में चित्रित किया है कि मन में वीर रस उत्पन्न हो उठता है, रग रग में रक्त संचार हो जाता है। वर्मा जी ने अन्त तक रानी को विदेशियों से संघर्ष करते हुए चित्रित किया है। एक तो कथानक ही वीर रस से पूर्ण, दूसरे वर्मा जी की प्रभावशाली लेखनी—वीर रस का बड़ा सफल चित्रण किया गया है प्रारम्भ के भाग में रानी के शौर्य की झलक मिलने लगती है। उनकी व्यायाम प्रियता, घुड़सवारी, शस्त्र संचालन देखकर मन उत्साह से भर जाता है। अन्तिम भाग में युद्धों का बड़ा सजीव वर्णन है। वीर रस के आधिक्य ने अन्य रसों—शृंगार, हास्य, करुण इत्यादि को दबा लिया है। इनके छींटे मात्र कहीं कहीं दिखाई देते हैं।

शृंगार का स्पर्श कहीं कहीं किया गया है। मोतीबाई खुदा-बख्श, मुन्दर-रघुनाथसिंह, जुही-तात्या आदर्श प्रेमियों के उदाहरण हैं। इन्हें लेखक ने बहुत कम स्थान दिया है। एक-एक डेढ़-डेढ़ पृष्ठों में संकेत मात्र सा कर दिया है। वह वीर रस के प्रतिपादन में ही पूर्ण तन्मय हुआ है। युद्ध प्रधान उपन्यास होने के कारण हास्य रस के भी कुछ हलके स्पर्श मिलते हैं। वीर रस प्रधान इस उपन्यास का अन्त करुण और शान्त रसों में हुआ।



